6

अभिभावकों की समस्याएँ

प्रेम व नफरत

बच्चे को उसका विवेक उसके माँ-पिता, शिक्षक, पादरी यानी उसके वातावरण से मिलता है। उसकी उलझनें दरअसल मानवीय स्वभाव और विवेक के बीच संघर्ष का परिणाम हैं। फ्रॉयड के पारिभाषिक शब्दों में कहें तो उसके 'सुपर ईगो' और उसके - 'इड' के बीच का संघर्ष।

विवेक इस कदर हावी हो सकता है कि बच्चा सन्यासी बन जाए, संसार और शरीर दोनों त्याग दे। अधिकांश दृष्टान्तों में एक तरह का समझौता होता है। यह समझौता इस कहावत में झलकता है, 'सप्ताह में छह दिन शैतान की चाकरी और इतवार को भगवान की।'

प्रेम और नफरत एक दूसरे के विलोम नहीं हैं। प्रेम का विलोम है उदासीनता। घृणा प्रेम का ही दूसरा पहलू है, जो दमन के कारण घृणा में बदल जाता है। घृणा में हमेशा भय का पुट होता है। यह हम उस बच्चे में देख सकते हैं जो अपने छोटे भाई से नफरत करता है। उसकी नफरत की जड़ इस भय में है कि वह माँ का प्यार खो देगा। साथ ही वह भाई के प्रति मन में उठी बदले की भावना से भी डरता है।

चौदह वर्षीय अंशी, एक विद्रोही स्वीडिश लड़की थी। समरहिल में आने के बाद उसने शुरुआत मुझे लतियाने से की ताकि मैं नाराज़ हो जाऊँ। दरअसल मैं उसके पिता की जगह था जिससे वह नफरत करती थी, डरती थी। उसे कभी अपने पिता की गोद नहीं मिली थी। न ही कभी पिता ने उसके प्रति अपना प्यार ही जताया था। जब उसके सहज प्यार के बदले उसके पिता ने प्रेम नहीं दिया, तो उसका प्यार नफरत में बदल गया। उसे समरहिल में अचानक एक नया पिता मिला जो सख्ती से व्यवहार नहीं करता था। पिता, जिससे वह डरती नहीं थी। ऐसे में उसकी नफरत उभरकर सामने आई। यह तथ्य कि अगले ही दिन उसका व्यवहार कोमल और स्नेहमय था, इस बात का प्रमाण है कि उसकी नफरत दरअसल परिवर्तित प्यार ही थी।

अंशी द्वारा मुझ पर किए गए हमले का महत्व समझने का मतलब होगा सेक्स के प्रति उसके विकृत दृष्टिकोण को समझना। अंशी एक बालिका विद्यालय से आई थी जहाँ लड़कियाँ अंधेरे कोनों में लुक-छिपकर यौन चर्चा करती थीं। अपने पिता के प्रति उसकी नफरत आंशिक रूप से उचित यौन-शिक्षा के अभाव के कारण भी

उपजी थी। अपनी माँ के प्रति भी उसके मन में नफरत थी क्योंकि उसने इस दिशा में स्वाभाविक जिज्ञासा को सज़ा देकर दबाया था।

अधिकांश माता-पिता यह नहीं समझते कि सज़ा देकर वे अपने बच्चों के प्यार को नफरत में बदल रहे हैं। बच्चों में नफरत को पहचानना आसान नहीं होता। माताएँ नहीं समझतीं कि पीटने के बाद बच्चे में दिखाई पड़ने वाली कोमल भावना दरअसल नफरत को दबाने का नतीजा है। दबाई गई भावनाएँ मरती नहीं हैं, केवल उस वक्त के लिए सो जाती हैं।

किशोरों के नीति उपदेश नाम से मारकस की एक पुस्तक है। मैं प्रयोग के रूप में बच्चों को अक्सर उसकी एक कविता की कुछ पंक्तियाँ पढ़कर सुनाता हूँ। उनका भावार्थ हैः

टॉमी ने अपना घर जलते देखा
माँ को लपटों में खत्म होते देखा,
देखा कि गिरती ईंट से पिता मर गया है,
और टॉमी हँसा, और हँसता गया। तब तक, जब तक वह बीमार न हो गया।

यह पंक्तियाँ बच्चों की पसन्दीदा पंक्तियाँ हैं। इन्हें सुनते या पढ़ते वक्त वे बड़े ज़ोर से हँसते हैं। अपने माता-पिता को खूब प्यार करने वाले बच्चे भी ज़ोर से हँसते हैं क्योंकि उनके मन में नफरत दबी होती है। वह नफरत जो पिटाई, आलोचना और सज़ा की वजह से भड़कती और दबाई जाती रही है।

अमूमन ऐसी नफरत काल्पनिक घटनाओं में उभरती है जिनमें माता-पिता प्रत्यक्ष रूप से जुड़े नहीं होते। अपने पिता को बेहद प्यार करने वाला एक किशोर छात्र, अक्सर कल्पना करता था कि वह एक शेर को गोली दाग रहा है। मैंने कहा कि वह शेर का वर्णन करे। जल्दी ही उसे लगने लगा कि वह शेर दरअसल उसके पिता से जुड़ा हुआ बिम्ब है।

एक सुबह मैंने हरेक बच्चे को एक-एक कर बुलाया और उन्हें अपनी मृत्यु की कहानी सुनाई। हरेक चेहरे पर उस वक्त एक चमक दिखी जब मैंने अपनी शव यात्रा का वर्णन किया। वह पूरा समूह उस दोपहर बेहद खुश नज़र आया। विशाल दैत्यों के मरने की कहानियाँ बच्चों को इसलिए पसन्द आती हैं क्योंकि वह दैत्य अमूमन पिता का बिम्ब होता है।

अपने अभिभावकों के प्रति नफरत को लेकर कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। इसकी शुरुआत हमेशा उस समय से होती है जब बच्चा अहंकारी होता है। छोटा बच्चा प्यार और सत्ता चाहता है। हरेक गुस्सैल शब्द, हरेक चपत, हरेक चोट, प्यार और

सत्ता से वंचित करने के समान है। बच्चे के लिए माँ के हरेक फटकार भरे शब्द का अर्थ है, ''माँ मुझे प्यार नहीं करती है।'' पिता के हरेक ''उसे मत छुओ'' के कड़कदार आदेश का अर्थ है, ''यह मेरे रास्ते में आता है। अगर मैं उनके नाप का होता।''

हाँ अभिभावकों में बच्चों के प्रति नफरत होती है, लेकिन वह उतनी खतरनाक नहीं होती जितनी बच्चों में अपने अभिभावकों के प्रति नफरत। अभिभावकों का दोष ढूँढना, गुस्सा करना, मारना और भाषण पिलाना नफरत की ही प्रतिक्रियाएँ हैं। अतः आपस में प्यार न करने वाले अभिभावकों के बच्चे के स्वस्थ विकास की सम्भावना बहुत ही कम है। क्योंकि बच्चों पर इसे उतारना ऐसे अभिभावकों की आदत में शुमार है।

जब बच्चे को प्यार नहीं मिलता है तो वह इसके विकल्प के बतौर नफरत चुनता है। ''माँ मुझ पर ध्यान नहीं देती है। वह मुझे प्यार नहीं करती है। वह मेरी छोटी बहन से प्यार करती है। मैं उसका ध्यान अपनी ओर खींचकर *ही* रहूँगा। मैं ऐसा ज़रूर करूँगा।'' और वह फर्नीचर को लात जमा देता है। बच्चों के व्यवहार की सभी समस्याएँ दरअसल इसलिए हैं क्योंकि वे प्यार के अभाव के प्रतीक थे। सभी सज़ाएँ और नैतिक उपदेश इस नफरत को बढ़ाते ही हैं। वे कभी भी समस्या का समाधान नहीं करते।

नफरत पैदा करने वाली एक और स्थिति वह है जब बच्चे के अभिभावक उस पर अपना स्वामित्व जताने लगते हैं। वह अपने बंधनों से नफरत करता है और साथ ही उनकी अपेक्षा भी करता है। यह द्वन्द्व कभी-कभी क्रूरता के रूप में उभरता है। स्वामित्व जताने वाली माता की नफरत दब जाती है लेकिन हरेक भावना को बाहर निकलना ही चाहिए इसलिए बच्चा बिल्ली को लात मारता है या अपनी बहन को मारता है। माँ के विरुद्ध जाने की बजाय यह एक आसान विकल्प है।

यह एक नीरस उक्ति बन गया है कि हम दूसरों में उस चीज़ से नफरत करते हैं जिसे हम खुद में नफरत करते हैं। यह प्रभावहीन तर्क हो या न हो पर यह सच है। अपने बचपन में पाई गई नफरत को हम अपने बच्चों को अर्पित कर देते हैं।

यह कहा गया है कि अगर आप नफरत नहीं कर सकते तो आप प्यार भी नहीं कर सकते। शायद। मेरे लिए नफरत करना मुश्किल काम है। और मैं हमेशा बच्चों को वह देने में असमर्थ रहा हूँ जिसे व्यक्तिगत प्यार कहा जा सकता है। और भावुक प्यार तो निश्चित तौर पर कभी भी नहीं। *भावुकता* शब्द को परिभाषित करना मुश्किल काम है। मैं इसे राजहंस के गुणों को बत्तख पर टिकाना कहता हूँ।

जब मैं एक चोर, एक आग लगाने वाले और कत्ल कर सकने वाले व्यक्तित्व रॉबर्ट

का उपचार करता हूँ तो मैं स्वाभाविक रूप से खुद में उसकी उसके पिता के प्रति प्यार और नफरत भी अन्तरण कर लेता हूँ। एक दिन मुझसे बात करने के बाद वह बाहर की ओर भागा और एक घोंघे को उसने अपने जूते से कुचल डाला। उसने मुझे आकर इस घटना के बारे में बताया भी। मैंने उससे घोंघे का वर्णन करने को कहा। उसका जवाब था, ''एक लम्बा, बदसूरत, चिपचिपा कीड़ा।''

मैंने उसे एक कागज़ दिया और उस पर घोंघा लिखने को कहा। उसने लिखा ''एक घोंघा।'' (A Snail)

मैंने कहा, ''देखो जो तुमने लिखा है।''

अचानक वह ज़ोर से हँसा। उसने अपनी पेंसिल

निकाली और उसके नीचे लिखा

A Snail

A.S. Neill

''क्या तुम्हें पता नहीं था कि मैं ही वह लम्बा, बदसूरत, चिपचिपा कीड़ा था जिसे तुम मारना चाहते थे, क्या तुम्हें पता था।'' मैंने मुस्कुरा कर कहा।

अब तक लड़के को मुझसे कतई खतरा न था। मुझे नफरत करने में उसके चेतन का बड़ा हाथ था। लेकिन अगर मैंने ऐसा कुछ कहा होता, ''बेशक मैं ही घोंघा था। पर तुम सचमुच मुझसे नफरत नहीं करते हो। तुम अपने उस हिस्से से नफरत करते हो जिसका मैं द्योतक हूँ। तुम वह चिपचिपे कीड़े हो जिसे मार डाला जाना चाहिए। तुम अपने ही एक गुण को मार डालना चाहते हो आदि..आदि।''

मेरे लिए यह एक खतरनाक मनोविज्ञान होता। रॉबर्ट का काम है कंचे खेलना और पतंग उड़ाना। मुझे या कोई शिक्षक या डॉक्टर को बस इतना ही करना चाहिए कि उसे उन द्वंद्वों से मुक्त कर दे जो पतंग उड़ाने में आड़े आते हैं।

कृतज्ञता की अपेक्षा करने वाले अभिभावक बच्चों की प्रकृति के बारे में कुछ भी नहीं जानते। बच्चे किसी के भी ऋणी नहीं होना चाहते। समरहिल में मुझे उन बच्चों की नाराज़गी का लम्बा अनुभव है जिन्हें मैंने कम फीस में या बिना फीस के रखा है। वे फीस देने वाले बीस बच्चों से ज़्यादा मात्रा में मुझसे नफरत करते हैं। शॉ लिखते हैं, ''हम जिनके लिए त्याग करते हैं उन्हें नफरत किए बगैर हम त्याग नहीं कर सकते हैं।''

यह सच है। इसका उलट भी सच है, ''हम तब तक दूसरों के लिए त्याग नहीं कर सकते जब तक कि हम उन लोगों की नफरत नहीं पा जाते जिनके लिए त्याग किया जा रहा है।'' एक अलमस्त प्रदाता कृतज्ञता नहीं चाह सकता। अपने बच्चों

से कृतज्ञता की अपेक्षा रखने वाले अभिभावकों को निराशा ही हाथ लगती है। अंत में यह कि सभी बच्चों को लगता है कि सज़ा नफरत है और बिलाशक वह है भी। और हर सज़ा बच्चे में नफरत को और और बढ़ाती ही है। अगर आप किसी ऐसे दकियानूस का अध्ययन करते हैं जो कहता है कि मैं पिटाई में विश्वास करता हूँ तो आप हमेशा उसे नफरत से भरा ही पाएँगे। मैं इस पर बहुत ज़ोर नहीं दे सकता कि नफरत से नफरत उपजती है और प्यार से प्यार। किसी भी बच्चे की नफरत का उपचार आज तक प्यार के सिवाय किसी और चीज़ से नहीं हुआ है।

बच्चे को बिगाड़ना

एक बिगड़ा बच्चा - आपने *बिगड़ा* शब्द का उपयोग चाहे जिस भी अर्थ में किया हो - वास्तव में एक बिगड़े समाज का उत्पाद है। ऐसे समाज में वह बच्चा भयातुरता के साथ जीवन से चिपटे रहता है। उसे आज़ादी की जगह स्वेच्छाचार की छूट दी गई है। वह वास्तविक आज़ादी का अर्थ तक नहीं समझ सका जिसका मतलब दरअसल जीवन-*प्रेम* ही होता है।

बिगड़ा बच्चा स्वयं अपने लिए तथा समाज के लिए समस्या होता है। रेलगाड़ियों में वह यात्रियों के पैर कुचलते चलता, गलियारों में चीखता, परेशान माँ-बाप के शान्त रहने के अनुरोध की अवहेलना करता मिलता है। दरअसल माता-पिता के अनुरोधों को वह न जाने कब से सुनना बन्द कर चुका होता है।

बाद के जीवन में, जैसे-जैसे वह बिगड़ा छोकरा बड़ा होता जाता है, उसकी ज़िन्दगी, एक अनुशासन में पले बच्चे की ज़िन्दगी से भी बदतर होती जाती है। बिगड़ा बच्चा बेहद आत्म-केन्द्रित होता है। वह ऐसा व्यक्ति बनता है जो अपने सोने के कमरे में अपने कपड़े बिखेरकर दूसरों से उसे समेटने की उम्मीद करता है। ज़ाहिर है कि अपने वयस्क रूप में वह बिगड़ा बच्चा तमाम बार लताड़ झेल चुका होता है।

अक्सर बिगड़ा बच्चा इकलौता बच्चा होता है। अपने उम्र का कोई साथी न तो उसे साथ खेलने को मिलता है, न खुद की तुलना करने को। स्वाभाविक ही है कि वह इस स्थिति में खुद का तादात्म्य अपने माता-पिता के साथ ही करता है। अर्थात वह ठीक वही सब करना चाहता है, जो उसके माता-पिता करते हैं। और क्योंकि माँ-बाप भी उसे दुनिया का अजूबा मानते हैं वे उसकी अक्ल-प्रौढ़ता को प्रोत्साहित करते हैं। वे उसे हल्के से भी डाँटने से बचते हैं क्योंकि उन्हें डर यह लगता है कि ऐसा करने पर वह कहीं रूठ न जाए।

कभी-कभार उन शिक्षकों में भी मुझे यही दृष्टिकोण दिखता है जो अपने छात्र-छात्राओं को लाड़ करते हैं। ऐसे शिक्षक हमेशा इस भय में जीते हैं कि कहीं बच्चों में उनकी लोकप्रियता खत्म न हो जाए। बिगाड़ने का शाही रास्ता है यही भय। अच्छे शिक्षक और माँ-बाप को अपनी निष्पक्षता पनपानी होगी। बच्चे के साथ अपने रिश्ते में उसे अपनी ग्रन्थियों को आड़े नहीं आने देना होगा। ज़ाहिर है ऐसा कर पाना कठिन है क्योंकि हमें अपनी मनोग्रन्थियाँ नज़र नहीं आती हैं। उदाहरण के लिए एक दुखी माँ के बच्चे के बिगड़ा बनने की पूरी सम्भावना है क्योंकि सम्भवतः वह उस पर गलत तरीके का स्नेह उकेलेगी।

समरहिल में बिगड़ा लड़का हमें हमेशा परेशान करता है। वह मेरी पत्नी को थका देता है, क्योंकि उसके लिए वह एक वैकल्पिक माँ की तरह होती है। वह तमाम सवाल पूछ-पूछकर मेरी पत्नी की जान खाता हैः ''यह सत्र कब खत्म होगा?'', ''समय क्या हुआ है?'', ''मुझे पैसे मिल सकते हैं?'' इस सबके तले छुपी होती है माँ के प्रति उसकी घृणा। ये सारे सवाल उसे सताने के मकसद से पूछे गए होते हैं। बिगड़ी लड़की हमेशा मुझे उकसाने की कोशिश करती है क्योंकि मैं उसके पिता के स्थान पर होता हूँ। उसकी कोशिश अमूमन प्रेम प्रतिक्रिया के बदले नफरत भरी प्रतिक्रिया उकसाने की रहती है। नई-नई आई बिगड़ी लड़की मेरा कलम छुपा लेती है या किसी दूसरी लड़की से कहती है, ''नील तुम्हें बुला रहा है।'' असल में वह चाहती है कि नील *उसे* बुलाए।

ऐसे बिगड़े लड़के-लड़कियों ने मेरे दरवाज़े को ठोकरें मारी हैं। इस कोशिश में मेरी चीज़ें चुराई हैं कि मैं प्रतिक्रिया करूँ। अचानक एक बहुसंख्यक परिवार में खुद को पाकर बिगड़े बच्चों को गुस्सा आता है। वे मुझसे और शेष शिक्षकों से उसी समर्पण की उम्मीद रखते हैं जो उसके प्रेमी माता-पिता से उसे मिला करता था।

बिगड़े बच्चों को अमूमन अधिक जेबखर्च दिया जाता है। जब माँ-बाप बच्चे के लिए एक पाउण्ड का नोट भिजवाते हैं तो मैं मन मसोसता हूँ। खासकर उस स्थिति में, जब मुझे उनकी आर्थिक परेशानियों के कारण बच्चे की फीस कम करनी पड़ी हो या पूरी तरह माफ करनी पड़ी हो।

बच्चे को, जो कुछ वह माँगे वह सब नहीं देना चाहिए। आजकल बच्चों को ज़रूरत से अधिक दिया जाता है। इतना कि वे भेंट की कीमत तक समझना बन्द कर देते हैं। ज़रूरत से ज़्यादा चीज़ें खरीद-खरीदकर देने वाले माँ-बाप अक्सर वे होते हैं जो अपने बच्चे को पूरा प्यार नहीं करते। ऐसे माता-पिता महँगी चीज़ें भेंट कर अपने प्रेम की कमी की आपूर्ति करते हैं। ठीक उसी तरह जैसे बेवफा पति, पत्नी को खुश करने के लिए ऐसा महँगा कोट भेंट करता है, जो उसकी जेब के बाहर हो। मेरा नियम यह है कि मैं अपनी हर लन्दन यात्रा के बाद अपनी बेटी के लिए

कोई भेंट न लाऊँ। नतीजतन वह हर यात्रा के बाद भेंट की उम्मीद भी नहीं रखती। बिगड़े बच्चों के लिए वस्तुओं का कोई मूल्य भी नहीं होता। उसे आप स्पीड वाली चमचमाती साइकिल दें, और तीन सप्ताह बाद वह उस साइकिल को रात भर बरसात में भीगने और जंग खाने छोड़ आता है।

बिगड़ा बच्चा दरअसल माता-पिता के लिए जीवन में दूसरे मौके का प्रतिनिधित्व करता है। *मैं ज़िन्दगी में बहुत कम हासिल कर पाया क्योंकि इतने लोगों ने मेरी राह में रोड़े अटकाए थे। पर मेरे छोटे बेटे को पूरा मौका मिलेगा कि वह वहाँ भी सफल हो सके जहाँ मैं खुद असफल रहा था।* इसी अन्तः प्रेरणा के चलते वह पिता अपने बच्चे पर पियानो बजाना सीखना लादता है जो स्वयं संगीत शिक्षा से वंचित रह गया था। विवाह के बाद अपने कैरियर को तिलांजलि देने वाली माँ अपनी बेटी को बैले नृत्य सीखने भेजती है, चाहे उसकी बेटी के पैरों में थिरकन तक न हो। ऐसे ही माता-पिता असंख्य लड़के-लड़कियों को ऐसी नौकरियाँ या पढ़ाई करने पर बाध्य करते हैं, जिनकी उन बच्चों ने कभी सपने तक में कल्पना नहीं की थी। माता-पिता अपनी भावनाओं के आगे लाचार हैं। कठोर परिश्रम से कपड़ा व्यवसाय जमाने वाले पिता को जब यह पता चलता है कि उसका बेटा अभिनेता या कलाकार बनना चाहता है, तो वह यह बात पचा नहीं पाता। पर अक्सर ऐसा ही होता है।

बिगड़े बच्चे की एक वह श्रेणी भी है, जिसमें माँ बच्चे को बड़ा होने देना तक नहीं चाहती। मातृत्व एक महत्वपूर्ण काम है - पर यह ताउम्र चलने वाली ज़िम्मेदारी नहीं है। अधिकांश माताएँ यह समझती हैं, पर अपनी बेटी के लिए अक्सर यह टिप्पणी भी करती रहती हैं, ''वह ज़रूरत से अधिक तेज़ी से बड़ी हो रही है।''

दूसरों के व्यक्तिगत अधिकारों को तोड़ने की छूट बच्चों को कभी नहीं दी जानी चाहिए। जो माता-पिता अपने बच्चों को बिगाड़ना नहीं चाहते उन्हें आज़ादी और स्वेच्छाचार में अन्तर समझ *लेना* होगा।

सत्ता और अधिकार

जब मनोविज्ञान ने अवचेतना के महत्व को उभारा, उसके पहले बालक को एक विवेकशील इन्सान माना जाता था। सोचा जाता था कि बालक में इच्छाशक्ति होती है। उसके सहारे वह अच्छा या बुरा करना स्वयं चुनता है। यह भी माना जाता था कि उसका दिमाग कोरी स्लेट के मानिन्द होता है जिस पर कर्तव्यनिष्ठ शिक्षक को बस लिखना भर है।

अब हम यह समझने लगे हैं कि बालक में कुछ भी स्थिर या गतिहीन नहीं होता। वह तो गतिशील आवेगों का पुलिन्दा है। वह अपनी इच्छाएँ कार्यों द्वारा व्यक्त करता है। वह वृत्ति से स्वार्थी होता है और हमेशा अपनी शक्ति को जाँचना चाहता है। अगर प्रत्येक वस्तु में सेक्स समाहित है तो सत्ता की चाहना भी हर जगह मौजूद है।

शिशु शायद यह समझ लेता है कि अपने आसपास के वातावरण पर उसकी सत्ता शोर से अभिव्यक्त होती है। उसके वयस्क संगी-साथियों की शोरगुल पर जो प्रतिक्रिया होती है, सम्भव है उससे शोर के महत्व की बढ़ी-चढ़ी छवि उसके मन में जगती हो। या फिर उसे शोर अपने आप में महत्वपूर्ण लगता हो।

बालवाड़ी में अक्सर शोर को दबाया जाता है। पर इसके भी पहले जो दमन होता है उसका सम्बंध बच्चे में स्वच्छता की आदतें डालने की कोशिश से है। हम यह अनुमान ही लगा सकते हैं कि शायद बच्चा मल-मूत्र त्याग की क्रियायों द्वारा स्वयं को ताकतवर समझता है। सम्भव है कि मलत्याग उसके लिए बेहद महत्वपूर्ण हो क्योंकि यह कुछ बनाने का उसका पहला कार्य होता है। मैंने कहा कि हम अनुमान ही लगा सकते हैं क्योंकि साल या दो साल की उम्र में बच्चा क्या महसूस करता है, क्या सोचता है, यह कोई बता ही नहीं सकता। सात-आठ वर्ष के बच्चे अपने मल त्याग में सत्ता का अनुभव करते हैं।

एक सामान्य महिला को शेर से डर लगता है। पर एक मनोरोगी महिला को चूहे से। शेर वास्तविक है पर चूहा उस दबाई गई रुचि का प्रतीक है जिसे पहचानने में वह डरती है। बच्चों की इच्छाएँ भी दमन से मनोग्रन्थियों में बदल सकती हैं। कई बच्चों को रात में डर लगता है। वे भूतों से, चोरों से या झोली वाले बाबा से डरते हैं। अज्ञानी माता-पिता मानते हैं कि आया द्वारा सुनाई गई कहानी इस भय का कारण है। पर आया की कहानी मनोग्रन्थि को केवल एक रूप भर देती है। उसके भय की जड़ है उसकी यौन रुचियों का माता-पिता द्वारा दमन। बच्चा अपनी दबाई गई रुचियों से ही डरता है। ठीक उसी तरह जिस प्रकार चूहे से डरने वाली महिला अपनी दबाई गई रुचि से डरती है।

आवश्यक नहीं कि दमन मूलतः यौन दमन ही हो। जो नाराज़ पिता चीखकर कहता है, ''यह शोर बन्द करो।'' वह शोर में बच्चे की रुचि को, पिता में भयातुर रुचि में तब्दील कर सकता है। जब बच्चे की इच्छा दबाई जाती है तो वह घृणा करता है। अगर मैं एक तीन साल के बच्चे से उसका खिलौना छीन लूँ तो वह सम्भव हो तो मुझे मार ही डाले।

एक दिन मैं बिली के साथ बैठा था। मैं एक आरामकुर्सी पर पसरा था जिसका कपड़ा काली और नारंगी धरियों का था। मैं बिली का एवज़ी पिता हूँ।

उसने कहा, ''एक कहानी सुनाओ।''

''तुम सुनाओ,'' मैंने कहा।

''ना'' उसका आग्रह था, वह नहीं सुना सकता मुझे ही सुनाना होगा।

''हम साथ-साथ कहानी सुनाते हैं,'' मैंने कहा। ''जब मैं रुकूँ तो तुम कुछ कहना, ठीक है? लो सुनो एक बार एक''

बिली ने मेरी कुर्सी की धारियों पर नज़र डाली और कहा, ''बाघ था।'' मैं समझ गया कि वह धारीदार पशु मैं ही था।

''वह बाघ, इसी स्कूल के बाहर सड़क किनारे रहता था। एक दिन, एक लड़का उस सड़क पर जा रहा था। लड़के का नाम था''

''डॉनल्ड,'' बिली ने कहा। डॉनल्ड उसके दोस्त का नाम है।

''वह बाघ उछला''

''और उसने डॉनल्ड को खा लिया।'' बिली ने तत्परता से जोड़ा।

''इस पर डेरिक ने कहा, 'बाघ मेरे भाई को खा ले, यह मैं होने नहीं दूँगा।' सो उसने अपनी बन्दूक उठाई और सड़क पर बाघ की ओर बढ़ा। बाघ फिर उछला और''

''और उसने उसे खा लिया।'' बिली खुशी से बोला।

''तब नील को बड़ा गुस्सा आया। 'मेरे सारे स्कूल को बाघ खा जाए यह मैं नहीं होने दूँगा।' उसने दो बन्दूकें उठाईं और बाहर निकला। बाघ उछला और''

''और उसे भी खा लिया।''

''इस पर बिली ने कहा यह तो चलेगा नहीं। उसने भी अपनी दो बन्दूकें, अपनी तलवार, छुरा और अपनी मशीनगन ले ली और सड़क पर निकला। बाघ उछला और''

''बिली ने बाघ को मार डाला,'' बिली ने विनम्रता से जोड़ा।

''बहुत खूब।'' मैं चीखा। ''उसने बाघ को मार डाला। वह बाघ को दरवाज़े तक घसीट कर लाया और एक आमसभा बुलाई। बैठक में एक शिक्षक ने कहा, 'नील तो अब बाघ के पेट में है और हमें एक नए हेडमास्टर की ज़रूरत होगी। मेरा प्रस्ताव है कि...'''

बिली ने नज़रें झुका लीं और चुप रहा।

''मेरा प्रस्ताव है कि...''

''तुम्हें पता है कि उसने मेरा नाम लिया था,'' बिली चिढ़कर बोला।

''और यों बिली समरहिल का हेडमास्टर बना,'' मैंने कहा। ''पता है उसने पहला काम क्या किया?''

''वह तुम्हारे कमरे में गया और उसने तुम्हारी खराद और तुम्हारा टाइपराइटर ले लिया,'' बिली ने बिना झिझक या शर्मिन्दगी के साथ कहा।

बिली की एक और कहानी है। उसने एक दिन मुझसे कहा, ''मुझे पता है कि मुझे पिताजी के कुत्ते से भी बड़ा कुत्ता कहाँ से मिल सकता है।'' उसके पिता के पास दो विशालकाय कुत्ते हैं।

''कहाँ से?'' मैंने जानना चाहा, पर वह सिर हिलाता रहा, और उसने जवाब नहीं दिया।

''तुम उसे क्या नाम दोगे, बिली?''

उसका जवाब था, ''होस पाइप।''

मैंने उसे कागज़ थमाया। ''ज़रा होस पाइप बनाकर तो दिखाओ।''

उसने एक बड़ा सा लिंग बनाया। मुझे अपने साइकिल में हवा भरने वाले पुराने पम्प की याद आई। मैं उसे लाया और बिली को दिखाया कि वह उसका उपयोग पानी छिड़कने के लिए कैसे कर सकता है।

''लो अब तुम्हारे पास तुम्हारे पिता से बड़ा होस पाइप है।'' वह ज़ोर से हँसा। होस पाइप में उसकी रुचि गायब हो गई।

सवाल यह है कि बिली का दृष्टान्त *यौन दृष्टान्त था या सत्ता का?* मुझे लगता है कि उसका मसला सत्ता से जुड़ा था। बाघ को (मुझे) मारने की इच्छा पिता को मारने की इच्छा का ही दोहराव था। इसका यौन से प्रत्यक्ष रूप से कोई लेना-देना नहीं था। अपने पिता के शिश्न से बड़े लिंग की इच्छा भी ताकत की इच्छा थी। बिली की कल्पनाएँ सत्ता सम्बंधी कल्पनाएँ थीं। मैं उसे अपने साथियों से बड़ी गप्पें हाँकते सुनता हूँ कि वह कैसे एक ही बार में कई हवाई जहाज़ उड़ा सकता है। उसकी हर बात में अहम झलकता है।

दबाई गई इच्छा कल्पना को जन्म देती है। हर बच्चा बड़ा बनना चाहता है। उसके परिवेश की एक-एक चीज़ उससे यही कहती है कि वह नन्हा-सा है। बच्चा उस परिवेश पर विजय चाहता है। यह विजय उसे उससे भागने पर मिलती है। वह अपने पंखों के सहारे ऊपर उठता है और कल्पना में अपने सपने जी लेता है। इंजन ड्राइवर बनने की महत्वाकांक्षा भी सत्ता की चाहना से उपजती है। तेज़ गति से दौड़ती एक समूची रेलगाड़ी को नियंत्रित करना, सत्ता का श्रेष्ठतम उदाहरण है।

बच्चों में *पीटर पैन* नामक पात्र लोकप्रिय है। इसलिए नहीं कि वह छोटा-सा है

बल्कि इसलिए क्योंकि वह उड़ सकता है, डाकुओं से भी लड़ सकता है। और वयस्कों को वह इसलिए पसन्द आता है क्योंकि वे भी बच्चे बनना चाहते हैं, बिना उत्तरदायित्वों के, बिना किसी संघर्ष के। पर कोई लड़का हमेशा के लिए लड़का नहीं बने रहना चाहता है। सत्ता की इच्छा उसमें आगे बढ़ने की, बड़े हो जाने की लालसा पैदा करती है।

बचकाना शोरगुल और जिज्ञासा का दमन बच्चों के सहज सत्ता प्रेम को विकृत कर देता है। जिन बच्चों को बालअपराधी कहा जाता है, जिन पर यह आरोप लगाया जाता है कि उन पर फिल्मों का दुष्प्रभाव है, वे दरअसल उसी सत्ता को अभिव्यक्त कर रहे होते हैं जिसे दबाया या कुचला गया है। मैंने पाया है कि असामाजिक घोषित किया गया लड़का जो खिड़कियाँ तोड़ने वाले हुजूम का नेता हो, आज़ादी के वातावरण में अमूमन कानून और व्यवस्था का पोषक बन जाता है।

एन्सी अपने स्कूल में नियम तोड़ने वालों की नेत्री थी। उसका स्कूल उसे रख नहीं पाया। समरहिल आने की दो रातों के बाद वह मुझसे खेल-खेल में लड़ने लगी। कुछ देर बाद वह लड़ाई खेल-खेल की नहीं रही। लगभग तीन घण्टों तक उसने मुझे लातें जमाई, काटा और लगातार कहती रही कि वह मुझे गुस्सा दिलाकर ही दम लेगी। मैंने भी ठान लिया था कि मैं नाराज़ नहीं होऊँगा, मैं मुस्कुराता रहा। ज़ाहिर है मुझे शान्त रहने में काफी ज़ोर लगाना पड़ा। अन्ततः मेरे एक शिक्षक ने मधुर संगीत बजाया। एन्सी शान्त हुई। एक ओर एन्सी के हमले का सम्बंध यौन से था, परन्तु उसका एक सत्ता पक्ष भी था। मैं उसकी नज़र में कानून और व्यवस्था का प्रतीक भी था। मैं हैडमास्टर जो था।

एन्सी को अपनी ज़िन्दगी अस्तव्यस्त लगने लगी। उसने पाया कि समरहिल में तोड़े जाने के लिए नियम-कानून हैं ही नहीं। बिन पानी की मछली-सा हाल हो गया उसका। उसने दूसरे छात्र-छात्राओं में गड़बड़ी फैलाने की कोशिश की, पर बिल्कुल छोटे बच्चों के अलावा उसकी दाल नहीं गली। व्यवस्था के विरुद्ध टोली के नेतृत्व में सत्ता नियंत्रण के जिस अहसास की उसे आदत थी उसे वह फिर से तलाशना चाहती थी। वास्तव में तो वह कानून और व्यवस्था से ही प्यार करती थी। पर वयस्कों द्वारा बनाई गई कानून व्यवस्था में उसे अपनी सत्ता अभिव्यक्त करने का कोई अवसर नहीं मिल पा रहा था। ऐसे में उसने दूसरा रास्ता चुना, वह रास्ता था कानून व्यवस्था के प्रति विद्रोह का।

उसके आने के सप्ताह भर बाद स्कूल की आमसभा हुई। एन्सी खड़ी हुई उसने हर चीज़ का मखौल उड़ाया। ''मैं कानून के लिए मत तो दूँगी, पर सिर्फ इसलिए क्योंकि उन्हें तोड़ने में मज़ा आएगा।''

हमारी गृहमाता खड़ी हुईं। उन्होंने कहा, ''एन्सी ने साफ कर दिया है कि उसे ऐसे

नियम नहीं चाहिए जिनका सब लोग पालन करते हों, सो मेरा प्रस्ताव है कि अब कोई नियम ही न हों, सिर्फ अव्यवस्था हो।''

एन्सी ने ज़ोर से कहा, ''हुर्रा!'' और छात्रों को कमरे से बाहर ले गई। यह वह आसानी से कर सकी क्योंकि वे सब छोटे बच्चे थे और उस उम्र में नहीं पहुँचे थे कि उनका सामाजिक विवेक विकसित हो चुका हो। वह बच्चों को कार्यशाला में ले गई, सबने आरियाँ उठाईं। उन्होंने घोषणा की, कि वे सारे फलों के पेड़ काट डालेंगे। मैं हमेशा की तरह बाग में खुदाई करने चल दिया।

दस मिनट बाद एन्सी मेरे पास आई, ''अव्यवस्था रोकने और फिर से नियम कानून लाने के लिए क्या करना होगा?'' उसने नरमी से जानना चाहा।

''मैं तुम्हें कोई सुझाव नहीं दे सकता,'' मेरा जवाब था।

''क्या एक और आम सभा नहीं बुलाई जा सकती?'' उसने पूछा।

''ज़रूर बुलाई जा सकती है, पर मैं उसमें नहीं आऊँगा। हमने तय किया है कि हमें अव्यवस्था चाहिए।'' वह लौट गई और मैं खुदाई करता रहा।

कुछ देर बाद वह वापस लौटी। ''हमने बच्चों की बैठक कर ली है,'' वह बोली, ''हमने तय किया है कि पूरे स्कूल की बैठक हो। तुम आओगे?''

''पूरे स्कूल की बैठक?'' मैंने पूछा। ''हाँ, मैं आऊँगा।''

बैठक में एन्सी गम्भीर थी। हमने शान्ति से अपने नियम पारित किए। अव्यवस्था के दौरान हुआ कुल नुकसान था - एक लकड़ी के खम्भे को दो में काट दिया गया था।

एन्सी ने सालों तक सत्ता के विरुद्ध अपने स्कूल की टोली का नेतृत्व करने का मज़ा उठाया था। विद्रोह भड़काने का काम उसे वास्तव में पसन्द नहीं था। उसे अव्यवस्था से घृणा थी। वह अपने बाहरी जामे के तले एक नियम-कानून का पालन करने वाली नागरिक थी। पर उसमें सत्ता की तीव्र इच्छा भी थी। शिक्षकों से विद्रोह कर वह स्वयं को उनसे भी अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध करना चाहती थी। उसे कानून इसलिए नापसन्द थे क्योंकि वह उस सत्ता से नफरत करती थी जो नियम बनाते हैं। उसका तादात्म्य दण्ड देने वाली अपनी माँ के साथ था। दूसरों के प्रति उसका दृष्टिकोण परपीड़ादाई था। हम केवल अनुमान ही लगा सकते हैं कि सत्ता के प्रति घृणा वास्तव में अपनी माँ की सत्ता के प्रति नफरत का प्रतीक था। मुझे ऐसे रोगियों का इलाज यौन दृष्टान्तों से भी कठिन लगता है। जिन घटनाओं ने बच्चे में यौन को लेकर अपराध-बोध जगाया हो, उन तक पहुँचना आसान है। पर उन हज़ारों घटनाओं और उपदेशों को जानना बड़ा कठिन है जो बच्चे को परपीड़ादाई सत्तालोलुप व्यक्ति में बदल देते हैं।

मुझे अपनी एक असफलता याद आती है। जब मैं जर्मनी में पढ़ाता था तो मेरे पास एक तेरह वर्षीय स्लाविक लड़की मारोस्लावा को भेजा गया। वह अपने पिता से बेहद नफरत करती थी। छह महीनों के लिए उसने मेरी स्कूली ज़िन्दगी नारकीय बना डाली। वह स्कूल की बैठकों में मुझ पर आरोप लगाती। एक बार उसने यह प्रस्ताव रखा कि मुझे स्कूल से निकाल दिया जाए क्योंकि मैं बिल्कुल निकम्मा इन्सान था। तीन दिन मैं छुट्टी पर रहा। पुस्तक लिखने का काम शुरू कर उसका आनन्द लेने लगा। पर दुर्भाग्य से एक और स्कूली बैठक हुई जिसमें निर्णय यह लिया गया (ज़ाहिर है कि एक मत विरोध का भी था) कि मुझे वापस बुलाया जाए। मारोस्लावा हमेशा कहती थी, ''मुझे स्कूल में बॉस नहीं चाहिए।'' वह सत्तालोलुप थी, उसका अहम् भी बहुत भारी-भरकम था। जब वह जाने लगी (मुझे उसकी माँ से कहना पड़ा कि मैं उसका इलाज नहीं कर पाया) तो मैंने उससे हाथ मिलाया।

''मैं तुम्हारी खास मदद नहीं कर पाया, है न?'' मैंने प्रेम से कहा।

''पता है क्यों?'' उसने रूखी मुस्कान के साथ पूछा। ''मैं बताती हूँ। मैं पहले दिन जब तुम्हारे स्कूल में आई, मैंने एक डिब्बा बनाया और तुमने कहा, मैं बहुत ज़्यादा कीलों का इस्तेमाल कर रही हूँ। उसी पल मुझे पता चल गया कि तुम भी दुनिया के दूसरे मास्टरों की तरह ही हो। एक बॉस हो। उस पल के बाद तुम मेरी मदद कर ही नहीं सकते थे।''

''तुम ठीक कह रही हो,'' मैंने कहा, ''नमस्ते।''

यह सम्भावना कहीं ज़्यादा है कि घृणा दबाए गए प्रेम के बदले, दबाई गई सत्ता हो। मारोस्लावा से जो घृणा का प्रस्फुटन होता था, वह ऐसा था जिसे महसूस किया जा सकता हो। सत्ता की भूख केवल पुरुषों की नहीं, महिलाओं की भी चारित्रिक विशेषता हो सकती है। आमतौर पर स्त्रियाँ अपनी सत्ता लोगों पर जमाना चाहती हैं, और पुरुष भौतिक वस्तुओं पर। मारोस्लावा और एन्सी निश्चित रूप से लोगों पर अपनी सत्ता जमाना चाहती थीं।

आठ वर्ष से कम उम्र का कोई बच्चा स्वार्थी नहीं होता, वह केवल अहंवादी होता है। जब किसी छह साल के बच्चे का पिता उसे निस्वार्थी बनने की शिक्षा देता है, स्वार्थी बनने पर पीटता है तो उसका विवेक शुरू में वस्तुपरक होता है। *जब पिता देख रहा हो तो मुझे अपनी मीठी गोलियाँ बाँटकर खानी चाहिए*। पर साथ ही तादात्म्य की एक प्रक्रिया भी शुरू हो जाती है। वह पिता जितना ही बड़ा बनना चाहता है, वह सत्ता पाना चाहता है। उसे माँ का उतना ही ध्यान चाहिए जितना पिता को मिलता है। उसका तादात्म्य पिता के साथ हो जाता है। इस प्रक्रिया में वह अपने पिता का दर्शन भी अपना लेता है। वह एक छोटा अनुदारवादी या छोटा उदारवादी बनता है। मानो उसकी आत्मा में उसका पिता ही जुड़ गया हो। चेतना,

जो अब तक पिता की बाहरी आवाज़ थी, अब उसके अन्तर में बसी पिता की आवाज़ में तब्दील हो जाती है। इसी प्रक्रिया से लोग कट्टर बैप्टिस्ट, या कैल्विनिस्ट या कम्यूनिस्ट बनते हैं।

जो लड़कियाँ अपनी माँ से पिटती हैं, वे स्वयं भी पीटने वाली बनती हैं। इसका अच्छा उदाहरण है स्कूल-स्कूल का खेल। उसमें जो शिक्षक बनता है वह हमेशा सबकी धुलाई करता है।

बड़े होने की बच्चों की इच्छा दरअसल सत्ता की कामना है। वयस्कों का आकार तब बच्चों में हीन भावना पैदा करता है। बड़े देर रात तक क्यों जग सकते हैं? उन्हीं के पास सबसे अच्छा टाइपराइटर, गाड़ी, औज़ार और घड़ियाँ क्यों होती हैं?

जब मैं हजामत करता हूँ तो मेरे छात्र अपने चेहरे पर साबुन लगाते हैं। उन्हें इसमें मज़ा आता है। धूम्रपान की इच्छा भी मुख्यतः बड़े होने की इच्छा ही है। अक्सर इकलौते बच्चों को सबसे ज़्यादा बाधाओं को झेलना पड़ता है। यही कारण है कि स्कूल में उसे सम्भालना भी सबसे कठिन होता है।

एक बार मैंने एक गलती की और एक लड़के को दूसरे छात्रों के आने से दस दिन पहले स्कूल ले आया। वह शिक्षकों के कमरे में बैठकर, अकेले सोने के लिए एक कमरा पाकर बड़ा खुश था। पर जब दूसरे बच्चे आ गए तो वह असामाजिक बन गया। अकेला था तो उसने कई चीज़ों की मरम्मत करने में मदद की थी, पर दूसरे बच्चों के आने पर वह तोड़फोड़ करने लगा। उसका गर्व आहत हुआ। अचानक वह वयस्क नहीं रहा। उसे चार दूसरे लड़कों के साथ एक बड़े कमरे में सोना पड़ा, उसे जल्दी सोने जाना पड़ा। उसके हिंसक विरोध ने मुझे यह निर्णय लेने पर मजबूर किया कि मैं बच्चे को कभी ऐसा मौका नहीं दूँ कि वह स्वयं का तादात्म्य वयस्कों के साथ कर ले।

जब सत्ता की इच्छा *बाधित* होती है तो वह बुराई का ही साथ देती है। मानव अच्छे होते हैं, वे भला करना चाहते हैं, वे प्रेम करना और पाना चाहते हैं। नफरत और विद्रोह वास्तव में बाधित प्रेम और बाधित सत्ता ही हैं।

ईर्ष्या/जलन

स्वामित्व की भावना से जलन पैदा होती है। अगर शारीरिक प्रेम व्यक्ति को अपने 'स्व' से परे ले जाता तो वह पुरुष अपनी प्रेमिका को किसी दूसरे पुरुष को चूमते पा, उसे खुश देखकर, खुद भी उसकी खुशी से प्रसन्न होता। पर शारीरिक या

यौनिक प्रेम के साथ स्वामित्व की भावना जुड़ी होती है। जिस व्यक्ति में स्वामित्व की भावना प्रबल हो वह जलन के कारण अपराध करता है।

ट्रोब्रिएण्ड द्वीप के निवासियों में यौनिक जलन की नामौजूदगी सुझाती है कि जलन हमारी अधिक जटिल सभ्यता का फल है। डाह या जलन अपनी प्यारी वस्तु या व्यक्ति के प्रति प्रेम तथा स्वामित्व के मिलेजुले भाव से उत्पन्न होता है। अक्सर कहा जाता है कि ईर्ष्यालु पुरुष उस व्यक्ति को गोली नहीं मारता जो उसकी पत्नी को भगा ले गया हो, बल्कि अपनी पत्नी की ही हत्या करता है। शायद इसलिए ताकि वह उस औरत को ही, जो उसकी संपत्ति है, उसके स्पर्श से दूर कर दे। यह बात कुछ वैसी है जैसे एक मादा खरगोश अपने उस शिशु को स्वयं खा जाती है जिसे लोग बहुत अधिक छूते हैं। एक शिशु का अहम् भी ऐसा ही होता है, उसे या तो सब कुछ चाहिए होता है या फिर कुछ भी नहीं। उसे बाँटना नहीं आता।

जलन का रिश्ता यौन से कम और सत्ता से अधिक है। जलन एक आहत अहम् की प्रतिक्रिया है। ''मैं उसकी नज़र में सर्वप्रथम नहीं हूँ। मैं सबसे प्यारा नहीं हूँ। मेरा स्थान गौण है।'' डाह का यही मनोविज्ञान हमें, व्यावसायिक गायकों या विदूषकों से मिलता है। मैं जब छात्र था तो मैं विदूषकों से सिर्फ इतना भर कहकर दोस्ती गाँठ लेता था कि वह दूसरा विदूषक बिल्कुल बेकार है।

जलन में हमेशा ही खोने के भय का पुट होता है। एक ऑपेरा गायिका, दूसरी प्रधान गायिका से नफरत करती है, क्योंकि उसे भय है कि उसकी वाहवाही में कमी आ जाएगी। तुलना से हम पाएँगे कि प्रतिष्ठा में कमी के भय से दुनिया में जितनी जलन पैदा होती है वह प्रेम में प्रतिद्वन्द्व से उत्पन्न जलन से कहीं अधिक है।

अतः परिवारों में बड़े बच्चे की नज़र में उसकी निजी कदर कितनी है, इसी भाव पर सब कुछ निर्भर करता है। अगर आत्म संचालन ने उसे इतना स्वतंत्र बना दिया है कि उसे हर पल माता-पिता के अनुमोदन की ज़रूरत न हो तो वह अपने नवजात भाई या बहन से उतना नहीं जलेगा जितना वह बच्चा जो स्वतंत्र न हो, जो अपनी माँ के पल्लू से बँधा हो और कभी भी पूरी तरह आत्मनिर्भर न बना हो। इसका मतलब यह नहीं है कि एक से अधिक बच्चों के माँ-बाप तटस्थ हो सिर्फ यही देखें कि बड़े बच्चे की छोटे बच्चे के लिए क्या प्रतिक्रिया है। हमें शुरू से ही ऐसे काम से बचना होगा जो जलन की भावना को उकसाए। उदाहरण के लिए घर आए मेहमानों के सामने अपने छोटे बच्चे का प्रदर्शन। हर उम्र के बच्चे में न्याय का भाव होता है - या कहें अन्याय का भाव होता है। समझदार माता-पिता हमेशा यह सुनिश्चित करने की कोशिश करते हैं कि छोटा बच्चा अधिक लाडला न बन जाए। उसे बड़े बच्चे से ज़्यादा तरजीह न दी जाए, यद्यपि ऐसा कर पाना हमेशा सम्भव नहीं होता।

बड़े भाई को यह भी अन्याय लग सकता है कि माँ छोटे भाई या बहन को स्तनपान कराती है। पर अगर बड़ा बच्चा स्तनपान का चरण स्वाभाविक रूप से पार कर चुका है तो शायद उसे जलन न हो। पर इस विषय पर हमें अधिक प्रमाणों की आवश्यकता है। एक आत्म संचालित बच्चे की नवागंतुक शिशु को लेकर क्या प्रतिक्रिया होती है, इसका मेरा निजी अनुभव नहीं है। जलन मानव स्वभाव की एक स्थाई वृत्ति है या नहीं, यह मैं नहीं जानता।

बच्चों के साथ के अपने लम्बे अनुभव में मैंने पाया है कि कई लोग बड़े हो जाने पर भी ऐसी किसी घटना की स्मृति नाराज़गी के साथ संजोए रखते हैं जिसमें उन्हें बचपन में अपने साथ हुआ अन्याय याद आता है। इसमें खासकर वे घटनाएँ होती है जिसमें छोटे द्वारा किए गए काम की सज़ा बड़े को झेलनी पड़ी हो। ''दोष मुझ पर ही थोपा जाता है'' यह गुहार कई बड़े भाई या बहन की होती है। जिस भी झगड़े में छोटा रो दे, तो व्यस्त माँ की स्वाभाविक प्रतिक्रिया होती है - बड़े को डपटना।

जिम की आदत थी कि जो मिले उसे चूमना। उसका चूमना भी, चूमना कम और चूसना अधिक होता था। मैंने निष्कर्ष निकाला कि जिम स्तनपान में अपनी शिशु रुचि से उबर नहीं पाया है। मैं जाकर उसके लिए दूध पीने की एक बोतल खरीद लाया। हर रात सोते समय जिम इस बोतल से दूध पीता। दूसरे लड़के जो शुरू में उस पर ज़ोर-ज़ोर से हँसते थे और यों बोतल में अपनी रुचि को छिपाते थे जल्दी ही जिम से जलने लगे। उनमें से दो ने बोतल की माँग की। जिम अचानक उस छोटे भाई की तरह हो गया जिसका माँ के स्तन पर एकाधिकार था। मैंने सबको बोतलें ला कर दीं। इस तथ्य ने कि दूसरों ने भी बोतलें माँगी, यह सिद्ध कर दिया कि इन लड़कों की स्तनपान में रुचि बरकरार थी।

भोजनकक्ष में जलन के प्रति खास सावधानी बरतनी पड़ती है। अगर मेहमानों के आतिथ्य में उन्हें कुछ खास व्यंजन परोसे जाएँ तो बच्चे तो क्या शेष कार्यकर्त्ता भी ईर्ष्यालु बन उठते हैं। अगर रसोइया किसी वरिष्ठ छात्रा को एस्पैरेगस जैसी कोई खास चीज़ थमा दे, तो पक्षपात के चर्चे होते हैं।

कुछ वर्षों पहले स्कूल में एक नये औज़ार बक्से (टूलकिट) के आगमन ने खासी परेशानी खड़ी कर दी। जिन बच्चों के पिता उन्हें बढ़िया और कीमती औज़ार नहीं दिलवा सकते थे, वे सब बेहद जलते और अगले तीनेक सप्ताह तक उनका व्यवहार असामाजिक बन गया। एक लड़का जो औज़ारों के उपयोग को बखूबी समझता था, उसने एक रन्दा उधार लिया। उसने उसकी धारक्षर पत्ती को हथौड़े से ठोक-पीटकर निकाल डाला और रन्दे को बर्बाद कर दिया। उसने मुझे बताया कि लोहा निकाला कैसे जाता है, यह वह भूल ही गया था। यह ध्वंसात्मक क्रिया चाहे सचेत

क्रिया रही हो या अवचेतन, थी यह जलन का परिणाम।

सम्भव है कि हर बच्चे के लिए उसका अपना कमरा हम उपलब्ध न करवा सकें, फिर भी उसका अपना कोना ज़रूर होना चाहिए, जहाँ वह अपने मन की कर सके। समरहिल की कक्षाओं में हर बच्चे की अपनी टेबल होती है, और अपनी एक जगह भी और वे अपने कोने को खूब मज़े से सजाते हैं।

हमारे यहाँ कई बार निजी सत्र भी जलन का कारण बनते हैं।''मेरी को निजी सत्र मिल रहे हैं, मुझे क्यों नहीं?'' यदाकदा ऐसा भी हुआ है कि कोई लड़की जानबूझकर समस्यात्मक बच्चे-सा आचरण करे, महज़ इसलिए कि उसका नाम भी निजी सत्र वाले बच्चों की सूची में शामिल कर लिया जाए। एक बार एक लड़की ने कुछ खिड़कियों के शीशे तोड़े। जब उससे पूछा गया तो उसने कहा, ''मैं चाहती हूँ कि नील मुझे निजी सत्र दे।'' ऐसा व्यवहार करने वाली लड़की अमूमन वह होती है जिसे लगता है कि उसके पिता ने उस पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया है।

क्योंकि बच्चे अपनी घरेलू समस्याएँ और जलन अपने साथ स्कूल में लेकर आते हैं, मुझे अपने काम में सबसे अधिक भय उन पत्रों से लगता है जो माता-पिता अपने बच्चों को लिखते हैं। मुझे एक बार एक पिता को साफ-साफ लिखना पड़ा कि, ''कृपया अपने पुत्र को पत्र न लिखें। जब-जब वह आपका पत्र पाता है, उसका व्यवहार बिगड़ जाता है।'' पिता ने मुझे तो कोई उत्तर नहीं भेजा पर अपने बेटे को पत्र लिखना बन्द कर दिया। करीब दो महीने बाद मैंने पाया कि उस लड़के के पास उसके पिता का पत्र आया है। मुझे नाराज़गी तो हुई पर मैं चुप रहा। उस रात करीब बारह बजे लड़कों के कमरे से चीखें सुनाई दीं। मैं उसके कमरे में भागता हुआ पहुँचा। मैं वक्त पर पहुँच गया इस कारण मैं हमारी बिलौटी को बचा सका जिसका गला घोंटने पर वह लड़का आमादा था। अगले दिन मैं उसके कमरे में वह पत्र ढूँढने गया। मुझे पत्र मिल गया। उसमें एक वाक्य था ''पिछले सोमवार को टॉम (लड़के का छोटा भाई) का जन्मदिन था। लिज़ी मौसी ने उसे एक बिल्ली का बच्चा भेंट दिया।'' जो कल्पनाएँ जलन से उपजती हैं वे अपराध की सीमाएँ नहीं मानतीं। ईर्ष्यालु बच्चा अपनी कल्पना में अपने प्रतिद्वन्द्वी की हत्या तक कर डालता है। दो भाई छुट्टियों के बाद समरहिल से घर जा रहे थे। बड़ा भाई बड़ा भयभीत हो गया, ''मुझे डर है कि फ्रेड रास्ते में खो जाएगा,'' वह दोहराता रहा। दरअसल उसे डर यह था कि कहीं उसका दिवास्वप्न साकार न हो जाए।

''ना,'' उस ग्यारह वर्षीय लड़के ने अपने भाई के बारे में कहा, ''ना, मैं ठीक यह नहीं चाहता कि वह मर जाए, पर अगर वह एक लम्बी यात्रा पर भारत या ऐसी किसी जगह चला जाए, और तब लौटे जब वह बड़ा हो चुका हो, तो यह मुझे अच्छा ही लगेगा।''

समरहिल में आने वाले हर नए छात्र या छात्रा को करीब-करीब तीन महीने तक दूसरे छात्र-छात्राओं की अवचेतन घृणा झेलनी पड़ती है। क्योंकि किसी भी परिवार में नवागंतुक के प्रति बच्चों की पहली प्रतिक्रिया घृणा की ही होती है। बड़ा बच्चा अमूमन यह मानता है कि माँ की आँखें अब बस उस नए बच्चे को ही देखती हैं, क्योंकि वही माँ से चिपट कर सोता है, माँ का सारा ध्यान वही पाता है। अपनी माँ के प्रति दबी नफरत की पूर्ति कई बार उसके प्रति अत्यधिक स्नेह से भी होती है। परिवार में अमूमन बड़ा बच्चा सबसे अधिक नफरत करता है। छोटे बच्चे को घर का इकलौता राजा होने का अनुभव ही नहीं होता। विचार करूँ तो लगता यह है कि मैंने जितने मनोविकार वाले बच्चे देखे हैं, उनमें सबसे खराब हाल या तो इकलौते बच्चों के थे या परिवार के सबसे बड़े बेटे या बेटी के।

बड़े बच्चे के मन में उपजी नफरत को माता-पिता अनजाने ही और उकसाते हैं। ''भई टॉम, तुम्हारा छोटा भाई ऊँगली पर लगी ऐसी छोटी-सी चोट पर इतना बखेड़ा कभी न करता।''

मुझे याद आता है कि जब मैं छोटा-सा था, उस वक्त एक लड़के का उदाहरण हमेशा मुझे दिया जाता था। वह उम्दा छात्र था, हमेशा कक्षा में अव्वल रहता था, दौड़ के सारे इनाम उसके नाम होते थे। उसकी मृत्यु हो गई। उसका अन्तिम संस्कार मुझे एक मधुर घटना के रूप में याद है।

शिक्षकों को अक्सर माता-पिता की जलन का सामना करना पड़ता है। समरहिल और मेरे प्रति स्नेह के कारण माता-पिता में उपजी ईर्ष्या के चलते मुझे एकाधिक बार अपने छात्र-छात्राओं से हाथ धोना पड़ा है। यह बात समझी जा सकती है। एक मुक्त शाला में बच्चे को वह सब करने की छूट मिलती है जो वह चाहता है, तब तक, जब तक वह छात्र-छात्राओं तथा शिक्षकों से बनी आम सभा द्वारा तय किए गए नियमों को न तोड़े। कई बार तो बच्चे छुट्टियों तक में घर नहीं जाना चाहते। जो माता-पिता स्कूल या शिक्षकों से डाह नहीं करते वे अमूमन ऐसे माता-पिता होते हैं जिनका घर में बच्चों से व्यवहार समरहिल में किए जाने वाले व्यवहार के समान होता है। वे अपने बच्चों में भरोसा करते हैं और उन्हें उनके सहज रूप में बने रहने की आज़ादी भी देते हैं। ऐसे बच्चे घर जाने के प्रति उत्साहित रहते हैं।

माता-पिता तथा शिक्षकों के बीच स्पर्धा की आवश्यकता है ही नहीं। अगर अभिभावक बच्चे के सहज प्रेम को निरंकुश आज्ञाओं और नियमों द्वारा नफरत में बदलते हैं, तो उन्हें यह पता ही होना चाहिए कि बच्चा स्नेह की तलाश किसी दूसरे ठौर पर करेगा। एक शिक्षक या शिक्षिका महज़ एवज़ी पिता या माता होते हैं। माता-पिता के प्रति स्वाभाविक प्रेम जब बाधित होता है तब वही शिक्षकों पर

उड़ेला जाता है। इसलिए क्योंकि उस शिक्षक को प्यार करना, पिता को प्यार करने से अधिक आसान है।

मैं ऐसे पिताओं की गिनती तक नहीं कर सकता जो ईर्ष्यावश अपने पुत्रों से नफरत करते हैं। ये पीटर पैन नुमा पिता थे जो अपनी पत्नियों से माँ का सा प्रेम चाहते थे, और अपने नन्हे प्रतिद्वन्द्वी 'यानी अपने पुत्र' से नफरत करने लगे थे और उनकी निष्ठुर पिटाई करते थे। श्रीमान पिता महोदय, आपको पारिवारिक त्रिकोण में अपनी स्थिति काफी पेचीदा लगेगी। आपके शिशु के आगमन के बाद, आप कुछ अर्थों में स्वयं को कटा हुआ पाएँगे। कई महिलाएँ प्रसव के बाद यौन-जीवन में अपनी रुचि खो देती हैं। ऐसा न भी हो तो भी आपके परिवार का चरित्र बदलेगा, आपको मिलने वाला प्यार भी अब बँटेगा। जो हो रहा है उसके प्रति आपको सचेत होना होगा, अन्यथा आप अपने ही शिशु से जलने लगेंगे। समरहिल में दर्ज़नों बच्चे ऐसे रहे हैं जिन्होंने माँ या पिता की जलन झेली है। इनमें अधिकतर दृष्टान्त पिता की ईर्ष्या के थे जिसमें पिता अपने ही पुत्र के प्रति कठोर और हिंसक बन गए थे। अगर पिता माँ का प्यार पाने के लिए अपने बच्चों से स्पर्धा करने लगे तो बच्चे कमोबेश मनोरोगी ही बनते हैं।

मैंने ऐसी माताओं को भी देखा है जो अपनी बेटियों की उस ताज़गी और सौंदर्य से नफरत करने लगती हैं, जिसे वे स्वयं खो चुकी हैं। अमूमन यह वे माताएँ होती हैं, जिन्होंने ज़िन्दगी भर कोई दूसरा काम नहीं किया होता है, जो भूतकाल में जीती हैं और सालों पहले अपनी जवानी के दिनों में जीते गए दिलों के दिवास्वप्न देखा करती हैं।

मैं पहले युवाओं को प्रेम में पड़ते हुए देख खीजने लगता था। इस भावना का विश्लेषण मैं कुछ यूँ करता था कि मेरी खीज इस आशंका के कारण है कि कहीं कोई गड़बड़ न हो जाए। पर तब मुझे अहसास हुआ कि सच्चाई कुछ और है। मुझमें युवाओं के प्रति स्वामित्व का भाव था। इस अहसास ने मेरी खीज और भय को धो दिया।

युवा वर्ग के प्रति ईर्ष्या एक वास्तविक सत्य है। एक सत्रह वर्षीया लड़की ने मुझे बताया था कि जिस निजी आवासीय शाला में वह पहले पढ़ती थी, वहाँ उसकी शिक्षिका वक्ष को शर्मनाक मानती थी। वह तंग अंतर्वस्त्रों द्वारा उन्हें छिपाने को कहा करती थी। यह दृष्टान्त एक चरम दृष्टान्त था, पर यह उसी सच्चाई को बयान करता है जिसे हम सब भूलने की कोशिश करते हैं। वह सच्चाई है कि हताश और दमित प्रौढ़ावस्था, युवाओं से नफरत करती है। इसलिए क्योंकि प्रौढ़ावस्था युवाओं से ईर्ष्या करती है।

तलाक

आखिर वह क्या है जो बच्चों को मनोरोगी बना डालता है? कई उदाहरणों में साफ नज़र आता है कि जब माता-पिता एक दूसरे से प्रेम नहीं करते, तो बच्चे पर विपरीत असर पड़ता है। एक मनोरोगी बच्चा प्यार का भूखा होता है। उसके घर में प्यार नहीं होता। वह माँ-बाप को हमेशा एक-दूसरे पर गुर्राते सुनता है। सम्भव है कि माँ-बाप अपने मन-मुटाव को बच्चे से दूर रखने की कोशिश भी करते हों। पर घर के वातावरण में उनके बीच का तनाव हमेशा तैरता है, जिसका बच्चे को पूरा अहसास होता है। वह जो सुनता है, उससे कहीं ज़्यादा वह हाव-भाव से समझता है। *प्यारी गुड़िया, आँख के तारे* जैसे प्यार के सम्बोधनों से किसी बच्चे को आप बहका नहीं सकते।

तमाम उदाहरणों के अलावा मेरे पास ऐसे भी बच्चे आए हैं:

एक पन्द्रह साल की लड़की जिसे चोरी की आदत थी। उसकी माँ, पिता के प्रति वफादार नहीं थी और बच्ची यह बात जानती थी।

एक चौदह वर्षीय लड़की, दुखी और खोई-खोई रहने वाली बच्ची। उसका रोग उस दिन से शुरू हुआ जब उसने अपने पिता को उनकी प्रमिका के साथ देखा।

एक बारह वर्षीय लड़की जो सबसे नफरत करती थी। उसके पिता नपुंसक थे और माँ बदमिज़ाज।

एक आठ वर्षीय लड़का जो चोर था। उसके माता-पिता खुल्लम-खुल्ला लड़ते थे।

नौ साल का लड़का जो काल्पनिक दुनिया में रहता था। उसके माता-पिता एक-दूसरे के प्रति अपनी नाराज़गी को छुपाए रखने की कोशिश करते रहते थे।

चौदह वर्षीय लड़की, जो बिस्तर गीला करती थी। उसकी माँ और पिता अलग-अलग रहते थे।

नौ वर्षीय लड़का जिसे घर में बदमिज़ाजी के कारण सम्भालना असम्भव था, कल्पना में खुद को महान समझता था। उसकी माँ अपने विवाह से बड़ी दुखी थी।

मुझे अहसास हुआ कि किसी बच्चे को उसके मनोरोग से छुटकारा दिलाना उस वक्त कितना कठिन है, जब उसके घर का वातावरण प्रेमविहीन हो। जब कोई माँ मुझसे पूछती है कि "मैं अपने बेटे/बेटी का क्या करूँ?" तो मेरा जवाब होता है, "आप स्वयं मनोविश्लेषक के पास जाएँ।"

कई बार दम्पत्ति मुझसे आकर यह कहते हैं कि अगर बच्चा न होता तो वे जुदा हो जाते। यह सच है कि एक-दूसरे से असन्तुष्ट माता-पिता *अगर* जुदा हो जाएँ तो अक्सर बेहतर रहता है। स्थितियाँ हज़ार गुना अधिक बेहतर होतीं। अगर विवाह सम्बंध में प्यार न हो तो घर-परिवार दुखी ही होता है। दुख और तनाव से भरा वातावरण बच्चे की आत्मा को मार डालता है।

दुखी वैवाहिक जीवन बिता रही माता का बच्चा अक्सर उसके प्रति घृणा दर्शाता है। वह अपनी माँ को खूब तकलीफ देता है, और इसी में उसे मज़ा आता है। ऐसा ही एक लड़का अपनी माँ को काटता और नोचता था। सताने के दूसरे कम तकलीफदेह तरीके होते हैं माँ का ध्यान हमेशा अपनी ओर आकर्षित करना। एडिपस सिद्धांत के अनुसार मामला वास्तव में उलटा होना चाहिए। छोटा बच्चा माँ का प्यार पाने में अपने पिता को अपना प्रतिद्वंद्वी मानता है। कोई भी इस बात को मानेगा ही कि जब पिता इस दौड़ से बाहर जा रहा है तो उसका बच्चा उसका उचित प्रेमी होगा ही और अपनी माता के प्रति उसकी कोमलता बढ़ जाएगी। लेकिन मैं अक्सर प्यार की बजाय बच्चे में माँ के प्रति बढ़ी हुई नफरत देखता हूँ।

जो माँ अपने विवाहित जीवन में खुश नहीं होती वह अपने बच्चों से पक्षपात करती है। वह अपना पूरा स्नेह किसी एक बच्चे पर उड़ेलती है। ज़ाहिर है कि एक बच्चे के लिए प्रेम बेहद महत्वपूर्ण होता है। पर असन्तुष्ट माँ या पिता अपने प्यार में संतुलन नहीं रख पाते। वे या तो बहुत अधिक प्यार उड़ेलते हैं या बहुत कम। यह कहना बड़ा मुश्किल है कि बहुत ज़्यादा या बहुत कम में कौन सी स्थिति ज़्यादा खतरनाक है।

जो बच्चा प्यार का भूखा है वह सबसे नफरत करता है, वह असामाजिक होता है, सबकी आलोचना करता है। और जो प्यार में डूबा रहता है वह माँ की लाड़ली या लाड़ला तो बनता है पर उसकी अन्तरात्मा दब्बू बन जाती है। माँ एक संस्थान का प्रतीक भी बन सकती है। जैसे कि एक घर के रूप में या मातृगिरजा, मातृभूमि आदि के रूप में।

मेरा तलाक कानून से कोई सरोकार नहीं है। मैं वयस्कों को कोई सलाह नहीं देना चाहता। पर बच्चों का अध्ययन करना मेरा सरोकार है। इसलिए माता-पिता को यह सलाह ज़रूर देना चाहता हूँ कि एक मनोरोगी बच्चे को फिर से स्वस्थ बनाना हो तो घर के वातावरण को बदलना ज़रूरी होगा। माँ-बाप को हिम्मत रखकर यह समझना होगा कि बच्चों पर उनका प्रतिकूल असर पड़ रहा है। एक माँ ने एक बार कहा था, ''अगर मैं अपने बच्चे से दो साल नहीं मिलूँगी तो मैं उसे खो दूँगी।''

मेरा जवाब था आप उसे पहले ही खो चुकी हैं। और सच, वे अपने बच्चे को खो *चुकी* थीं, क्योंकि वह घर में बेहद दुखी था।

अभिभावकों की चिन्ताएँ

कहा जा सकता है दुश्चिन्ताग्रस्त माँ या पिता वे हैं जो दे नहीं सकते। यानी जो अपना प्यार, सम्मान, विश्वास अपने बच्चों को नहीं दे सकते।

हाल में एक माँ अपने बेटे के पास समरहिल आई। पूरे शनिवार-इतवार उन्होंने उसका जीना दूभर कर दिया। वह भूखा नहीं था, पर वे तब तक उसके सिर पर सवार रहीं जब तक उसने पूरा खाना ठूँस न लिया। वह पेड़ पर लकड़ी का घर बनाकर गन्दा होकर आया, उन्होंने तुरन्त उसे स्नानघर में ले जाकर रगड़-रगड़कर साफ कर दिया। उसने अपने जेब खर्च से आइसक्रीम खरीदकर खाई तो उन्होंने भाषण दे डाला कि आइसक्रीम उसके पेट को नुक्सान पहुँचाएगी। जब बच्चे ने मुझे मेरे नाम से पुकारा तो उन्होंने तुरन्त टोका कि मुझे *मिस्टर* नील पुकारा जाए।

मैंने उनसे कहा, ''जब आप इतनी ही चिन्ताग्रस्त रहती हैं तो आपने अपने बेटे को इस स्कूल में क्यों दाखिला दिलवाया?''

उन्होंने बेहद मासूमी से जवाब दिया, ''क्यों? इसलिए क्योंकि मैं चाहती हूँ कि वह मुक्त और खुश रहे। मैं चाहती हूँ कि वह बड़ा होकर आत्मनिर्भर बने, उस पर बाहरी चीज़ों का बुरा असर न पड़े।''

मैंने जवाब में कहा, ''ओह।'' और सिगरेट सुलगा ली। सच उस महिला को कतई यह इल्म नहीं था, कि वह अपने बेटे पर ज़्यादती कर रही है या बेवकूफी में अपने कुण्ठाग्रस्त जीवन की समूची दुश्चिन्ताएँ अपने बेटे की ओर उड़ेल रही है।

मेरा सवाल यह है, ''इस बारे में क्या किया जा सकता है?'' दरअसल कुछ भी नहीं। सिवाए इसके कि माता-पिता की दुश्चिन्ताओं से बच्चों को पहुँचने वाले नुकसान के कुछ उदाहरण सामने रख दूँ। इस आशा के साथ कि शायद लाख में से एक माँ या पिता उन्हें पढ़कर यह कहे, ''अरे, ऐसे तो मैंने कभी सोचा ही नहीं। मैं तो माने बैठा हूँ कि मैं बिल्कुल सही व्यवहार कर रहा हूँ। शायद गलती मेरी है।''

एक परेशान माँ ने मुझे लिखा, ''मुझे समझ ही नहीं आता कि मैं अपने बेटे का क्या करूँ? वह बारह साल का है और उसने अचानक वुलवर्थ की दुकान से चोरी करना शुरू कर दिया है। कृपया मुझे बताएँ कि मुझे क्या करना चाहिए।'' यह बात कुछ ऐसी है कि कोई आदमी बीस साल से हर दिन दारू की एक पूरी बोतल

गटकता रहा हो और तब उसे पता चले कि उसका जिगर पूरी तरह बर्बाद हो गया है। उस समय उसे यह सलाह देना निरर्थक होगा कि भाई दारू को हाथ न लगाना। इसलिए बाल व्यवहार की समस्या से ग्रस्त बच्चे की माँ को मैं यही सुझाता हूँ कि वे बाल-मनोचिकित्सक के पास जाएँ या बच्चों की क्लिनिक का पता ढूँढ वहाँ सम्पर्क करें।

यह भी सम्भव है कि उस परेशान माँ को जवाब में लिखूँ कि, ''देवीजी, आपका बेटा इसलिए चोरी करता है क्योंकि उसके घर का वातावरण असन्तोषजनक है। वह बड़ा दुखी है। उसे बढ़िया घरेलू वातावरण उपलब्ध करवाएँ।'' पर ऐसा करने पर मैं उसमें अपराध-बोध जगा दूँगा। अगर वह नेक नीयत रखती होगी तब भी वह अपने बेटे को अनुकूल वातावरण नहीं दे सकेगी, क्योंकि उसे पता ही नहीं होगा कि वह वातावरण को कैसे बदले। और अगर वह यह जानती भी हो तो उसमें ऐसा कर पाने के लिए आवश्यक भावनात्मक क्षमता नहीं होगी।

पर एक मनोचिकित्सक के दिशानिर्देश में, एक इच्छुक माँ, काफी कुछ बदल सकेगी। सम्भव है कि मनोचिकित्सक उसे अस्नेही पति से बच्चे को दूर रखने की, या सख्त दादी-नानी से उसे अलग करने की सलाह दे। पर जो मनोचिकित्सक बदल नहीं सकेगा, वह है उस महिला का अन्तस। वह महिला जो लगातार नीति उपदेश देने पर बाध्य है, जो चिन्ताग्रस्त है, भयभीत है, सेक्स के विरुद्ध है, जो हमेशा बच्चे के पीछे पड़ी रहती है। ज़ाहिर है कि सिर्फ बाहरी वातावरण बदलने की अपनी ही सीमा होती है।

मैंने एक डरी माँ का ज़िक्र तो कर दिया, पर मुझे एक दूसरे किस्म की माँ के साथ एक साक्षात्कार याद आ रहा है। वह हमारी सात वर्षीय भावी छात्रा की माँ थी। उसने जितने सवाल पूछे सभी दुश्चिन्ता से उपजे थे। ''क्या यहाँ कोई इस बात का ध्यान रखता है कि बच्ची ने सुबह और रात मंजन किया है या नहीं? कोई इस पर नज़र तो रखेगा न कि वह कहीं सड़क पर न चल दे? क्या उसे रोज़ पढ़ाया जाएगा? कोई उसे हर रात उसकी दवा तो पिलाएगा न?'' ऐसी चिन्ताग्रस्त माँएँ अचेतन ही अपने बच्चों को अपनी अनसुलझी समस्याओं का हिस्सा बना देती हैं। एक और माँ थी जो हमेशा अपनी बिटिया के स्वास्थ्य को लेकर चिन्तित रहती थी। वह मुझे लगातार लम्बी-लम्बी चिट्ठियाँ लिखती थी जिसमें हमेशा निर्देश होते थे कि बच्ची को क्या खाना है, क्या नहीं, कैसे कपड़े पहनाने हैं आदि-आदि। मेरे पास चिन्तित माता-पिता के तमाम बच्चे रहे हैं। मैंने हमेशा पाया है कि चिन्तित माता-पिता के बच्चे उनकी चिन्ताएँ विरासत में पा लेते हैं। अक्सर इसका परिणाम रोगग्रस्त 'हाइपोकोंड्रियाग्रस्त' बच्चा होता है।

मार्था का एक छोटा भाई था। माता-पिता दोनों ही हमेशा दुश्चिन्ताग्रस्त रहते थे। मैं अभी भी सुन पा रहा हूँ कि मार्था बाग में अपने भाई को चिल्लाकर नसीहत

दे रही है, ''अरे ताल में न जाना, पैर गीले हो जाएँगे।'' या ''रेत में मत खेलो, तुम्हारी नई पैंट गन्दी हो जाएगी।'' मैंने लिखा कि मैं सुन पा रहा हूँ, दरअसल मुझे लिखना चाहिए था कि जब वह हमारे स्कूल आई उस वक्त मैं सुना करता था। आजकल अगर उसका भाई चिमनी साफ करने वालों जैसा लगे तो भी उसे फर्क नहीं पड़ता। पर अब भी सत्र समाप्ति के सप्ताह भर पहले उसकी पुरानी चिन्ताएँ लौट आती हैं। क्योंकि उसे यह अहसास होता है कि वह घर के लगातार चिन्ताग्रस्त वातावरण में लौटने वाली है।

कभी-कभी मुझे लगता है कि कठोर अनुशासन वाले स्कूल इसलिए लोकप्रिय होते हैं, क्योंकि तब छात्र-छात्राएँ छुट्टियों में घर लौटने से बेहद खुश होते हैं। उस समय माता-पिता, बच्चों के खुश और खिले चेहरों में घर के प्रति प्यार देख पाते हैं। जबकि स्कूल के लिए उनके मन में नफरत ही होती है। पर बच्चे की नफरत सख्त और कठोर शिक्षकों की ओर पलट जाती है, और उसका प्यार माता-पिता पर उमड़ता है। यहाँ वही मनोविज्ञान काम करता है जब माँ बच्चे के मन में यह कहकर पिता के प्रति नफरत जगाती है, ''ठहरो, रात पापा को लौटने दो। वे ही तुम्हें ठीक करेंगे।''

मैं अक्सर चिकित्सकों और दूसरे व्यवसायों से जुड़े पुरुषों को कहते सुनता हूँ, ''मैं अपने बेटों को एक बड़े प्राइवेट स्कूल में पढ़ा रहा हूँ, ताकि उनका उच्चारण बढ़िया हो और वह ऐसे लोगों से मिलें, जो उनके काम आ सकें।'' वे यह मानकर चलते हैं कि हमारे सामाजिक मूल्य ठीक वैसे ही बने रहेंगे जैसे पिछली पीढ़ियों के थे। भविष्य को लेकर माता-पिता के मन में एक निहायत वास्तविक भय होता है।

माता-पिता कठोर अनुशासन वाले स्कूल तब चाहते हैं, जब उनके घर में भी कठोर अनुशासन हो। ताकि बच्चों के दमन की घर की परम्परा स्कूल में जारी रहे। वे बच्चे को शान्त, सम्मान करने वाले और नपुंसक बनाते हैं। और फिर ऐसे स्कूल बच्चे के दिमाग को प्रशिक्षित करने का बेहतरीन काम भी करते हैं। वे उसके भावनात्मक जीवन और रचनात्मक इच्छाओं पर अंकुश लगाते हैं। ऐसे स्कूल बच्चों को सिखाते हैं कि उन्हें सभी तानाशाहों और बॉस का हुक्म मानना है। बालवाड़ी से ही बच्चे के मन में डर के बीज रोपे जाते हैं। वे सत्तालोलुप कठोर शिक्षकों के अनुशासन में पनपते हैं। औसत माता-पिता बच्चे का बाहरी रूप देखते हैं। वे उसके स्कूल ब्लेज़र, सतही शिष्टाचार और फुटबॉल भक्ति से खुश होते रहते हैं। वे मानते हैं कि उनका लाडला उम्दा शिक्षा पा रहा है। इस तथाकथित शिक्षा की बलिवेदी पर बच्चे के जीवन को चढ़ते देखना तकलीफ देता है। कठोर स्कूल केवल सत्ता की माँग करते हैं और भयभीत माता-पिता इससे खुश होते हैं।

हरेक अहम्-केन्द्रित सत्ता की चाह के अनुरूप एक शिक्षक का अहम् भी बच्चों को अपनी ओर खींचता है। पर ज़रा सोचें कि शिक्षक किस कदर माटी का देवता है।

वह हमेशा केन्द्र में रहता है, वह आज्ञा देता है जिसकी अनुपालना की जाती है। वह न्याय करता है। कक्षा में वही बोलता है। एक मुक्तशाला में सत्ता का विचार ही खत्म कर दिया जाता है। समरहिल में यह गुंजाइश नहीं है कि शिक्षक अपने अहम् का प्रदर्शन करे। वह बच्चों के मुखर अहम् भाव से टक्कर नहीं ले पाता। अक्सर बच्चे मेरे प्रति आदर भाव दर्शाने के बदले मुझे 'बेवकूफ' या 'गधा' कहते हैं। अमूमन ये नाम उनके स्नेह का प्रतीक होते हैं। एक मुक्त शाला में स्नेह और प्रेम का भाव महत्वपूर्ण होता है। शब्द गौण बन जाते हैं।

समरहिल में आने वाला बच्चा अमूमन एक कठोर दुश्चिन्ताग्रस्त घर से आता है। उसे यहाँ मनचाहा करने की छूट मिलती है। उसकी कोई आलोचना नहीं करता। कोई उसे शिष्टाचार बरतने को नहीं कहता। कोई उसे यह नहीं कहता कि वह इस कदर चुप रहे कि वह दिखे तो, पर सुनाई न दे। ज़ाहिर है कि बच्चे को यह स्कूल स्वर्ग समान लगता है। क्योंकि एक लड़के के लिए स्वर्ग वही है जहाँ वह अपने समूचे अहम् को अभिव्यक्त कर सके। स्वयं को अभिव्यक्त कर पाने की खुशी अक्सर उनके मन में मुझसे जुड़ जाती है। उनकी नज़र में मैं ही वह व्यक्ति हूँ जो उन्हें आज़ादी देता है। मैं वह पिता बन जाता हूँ जैसा पिता होना चाहिए। दरअसल वह लड़का मुझसे प्यार नहीं करता। बच्चे असल में प्यार करते ही नहीं हैं, वे तो बस प्यार चाहते हैं। उनके विचार जो शब्दों का रूप नहीं लेते दरअसल ये होते हैं - *मैं यहाँ खुश हूँ। वह बूढ़ा नील खासा भला आदमी है। वह कभी टाँग नहीं अड़ाता। ज़रूर वह मुझसे प्यार करता है, नहीं तो वह मुझपर हुकुम न चलाता?*

जब छुट्टियाँ होती हैं बच्चा स्कूल से घर जाता है। घर में वह पिता की टॉर्च इस्तेमाल करता है और उसे किसी कोने में भूल आता है। पिता नाराज़ होते हैं। बच्चा समझ लेता है कि घर में आज़ादी नहीं है। एक लड़का मुझसे अक्सर कहा करता था मेरे घरवाले पुराने विचारों के हैं। मैं यहाँ की तरह घर पर आज़ाद नहीं हूँ। मैं जब घर लौटूँगा तो मैं अपनी माँ और अपने पिता को सबक सिखा दूँगा। उसने शायद यही किया होगा, क्योंकि उसका स्कूल बदल दिया गया।

मेरे कई छात्र-छात्राओं को 'रिश्तेदारियों' का रोग है। फिलहाल मेरा मन है कि मैं अपने छात्र छात्राओं के कुछ रिश्तेदारों से बहसबाज़ी कर लूँ। इनमें से दो दादा-नाना (धार्मिक प्रवृत्ति के), चार चाचियाँ-मासियाँ-बुआएँ या मामियाँ (धार्मिक प्रवृत्ति की होने के साथ कपट-लजालू भी), दो चाचा-मामा (अधार्मिक पर नीति उपदेशक) हैं। मैंने अपने एक छात्र को उसके दादाजी के पास भेजने से मना कर दिया था क्योंकि वे हमेशा बड़े उत्साह से नरक की ज्वाला से उसे डराते थे। पर उसके माँ-बाप ने कहा कि ऐसा करना सम्भव नहीं होगा। बेचारा बच्चा।

मुक्तशाला में बच्चे अपने रिश्तेदारों से बच जाते हैं। आजकल मैं उन्हें फटकने नहीं देता। दो साल पहले एक चाचाजी पधारे और अपने नौ साल के भतीजे को घुमाने

ले गए। लड़का लौटा और भोजनागार में डबलरोटी फेंकने लगा। मैंने कहा, ''लगता है बाहर जाकर तुम्हें बहुत बुरा लगा है। तुम्हारे चाचा ने क्या बातें कीं?''

उसने बड़े हल्केपन से कहा, ''ओह, चाचा तो ईश्वर की बात करते रहे। ईश्वर और बाइबल।''

''क्या उन्होंने बाइबल से वे पंक्तियाँ सुनाईं जहाँ अपनी रोटी पानी में फेंकने का उल्लेख है?'' यह पूछते ही वह हँसने लगा। तब उसने डबलरोटी फेंकना बन्द किया। अब जब चाचाजी पधारेंगे तो बच्चा अनुपलब्ध होगा।

अपने बच्चों के माता-पिता से मुझे खास शिकायत नहीं है। हमारी खासी पटती भी है। अधिकांश माता-पिता सभी चीज़ों में पूरा साथ देते हैं। कुछेक के मन में आशंकाएँ उठती हैं, पर वे फिर भी विश्वास करते हैं। मैं उन्हें अपनी पद्धति की बात साफ बताता हूँ। मैं हमेशा साफ कहता हूँ कि यही चलेगा, इसे पूरी तरह स्वीकारना होगा। मान्य न हो तो बच्चे को दाखिल ही न कराओ। जो पूरा साथ देते हैं, उनके मन में जलन का भाव नहीं उपजता। क्योंकि ऐसे में बच्चे घर में भी उतने ही आज़ाद होते हैं जितना स्कूल में।

पर जिन बच्चों के माता-पिता समरहिल के तौर-तरीकों में पूरा विश्वास नहीं करते, वे छुट्टियों में घर जाने से कतराते हैं। उनके माता-पिता उनसे काफी अपेक्षाएँ रखते हैं। वे यह नहीं समझते कि एक आठ साल का बच्चा मुख्यतः सिर्फ खुद में रुचि लेता है। उसके मन में न तो सामाजिक भावना होती है न ही कर्तव्य का कोई भाव। समरहिल में हम उसे उसके आत्मकेन्द्रितपन को अभिव्यक्त करने का पूरा मौका देते हैं, ताकि वह उस चरण से उबर सके। हम मानते हैं कि एक दिन वह खुद-ब-खुद बदल जाएगा, क्योंकि वह दूसरों के अधिकारों और मतों का सम्मान करना सीख चुका होगा। बच्चों की नज़र से देखें तो स्कूल और घर में जो अन्तर है वह काफी खतरनाक होता है। विरोधाभासी विचार व अवधारणाएँ उसमें द्वन्द्व पैदा करते हैं। सही भला कौन है, घर या स्कूल? बच्चे के विकास और शान्ति के लिए ज़रूरी है कि घर और स्कूल का उद्देश्य एक ही हो, दृष्टिकोण साझा हो।

माता-पिता और शिक्षकों में मतभेद का मुख्य कारण मुझे डाह लगता है। एक पन्द्रह वर्षीय छात्रा ने एक बार मुझे कहा, ''अगर मुझे अपने पापा को बहुत खिझाना या गुस्सा दिलाना हो तो उनसे सिर्फ इतना ही कहना काफी होता है 'नील साब फलाँ-फलाँ कहते हैं।''' चिन्ताग्रस्त माता-पिता उन सभी शिक्षकों से जलते हैं जिन्हें बच्चा प्यार करता है। और यह स्वाभाविक भी है, आखिर बच्चे भी एक तरह से आपकी सम्पत्ति ही होते हैं। वे माता-पिता के अहम् भाव का ही हिस्सा होते हैं।

और फिर शिक्षक भी वैसे ही होते हैं, मानवीय कमज़ोरियों से भरे हुए। कई शिक्षकों के अपने बच्चे भी नहीं होते। वे अचेतन रूप से अपने छात्र-छात्राओं को गोद ले

लेते हैं। अक्सर वे अजाने ही माता-पिता से बच्चा छीनने की कोशिश में जुट जाते हैं। यह ज़रूरी है कि शिक्षकों का विश्लेषण भी किया जाए। ऐसा नहीं है कि मनोविश्लेषण इन सब फसादों की रामबाण औषधि है। उसका असर सीमित ही होता है, फिर भी उससे कम से कम ज़मीन तैयार हो सकती है। इसका मुख्य फायदा यह है कि इसके सहारे दूसरों को समझाना आसान बन जाता है। व्यक्ति में उदारता बढ़ती है। सिर्फ इसी कारण मैं इसे शिक्षकों के लिए उपयोगी मानता हूँ। जिस शिक्षक का विश्लेषण हो चुका है वह बच्चों के प्रति अपने नज़रिए को समझने लगता, उसका सामना कर, खुद को सुधार सकता है।

जिस घर में भय और द्वन्द्व उपजें वह खराब है। अपने बच्चे को बहुत धकियाने वाले चिन्ताग्रस्त माता-पिता उसे नाराज़ बना देते हैं। अचेतन रूप से वह बच्चा अपने मन में यह ठान लेता है कि वह अपने माता-पिता को किसी कीमत पर नहीं जीतने देगा। पर जिस बच्चे का पालन-पोषण दुश्चिन्ताओं और द्वन्द्वों के बीच न हुआ हो, वह जीवन को एक साहसिक अभियान के रूप में स्वीकारता है।

अभिभावकों की जागरूकता

जागरूक होने का मतलब है पूर्वाग्रहों से, बचकाने दृष्टिकोणों से मुक्त होना। या कहें यथासम्भव आज़ाद होना। क्योंकि बचपन में जो अनुकूलन हो जाता है, उससे पूरी तरह आज़ाद भला कौन हो पाता है? जागरूक होने का मतलब है चीज़ों को गहराई से समझना, सतही चीज़ों को छोड़ देना। बच्चों के प्रति भावनात्मक जुड़ाव के चलते यह आसान नहीं होता। *मैंने अपने बच्चों की ज़िन्दगी किस कदर उलझा दी है!* यह रोना सैकड़ों खतों में मैं सुनता हूँ। पर बच्चों को आज़ादी के मार्ग पर चला पाने में शिक्षक अभिभावकों से ज़्यादा सफल होते हैं। क्योंकि वे बच्चों से कुछ दूरी बनाए रख सकते हैं।

कई बार मुझे किसी पिता को खत लिखकर भी समझाना पड़ा है कि उसके समस्यात्मक बेटे को सुधारने की सम्भावना केवल तभी बनेगी जब वे स्वयं अपने तौर-तरीकों में भी कुछ फेरबदल करें। मुझे यह समझाना पड़ा कि यदि घर पर सिगरेट पीने पर उसकी पिटाई होती है, तो समरहिल में सिगरेट पीने की छूट देना असम्भव है। यही बात *न नहाने, कपड़े न धोने, मन आए तो न पढ़ने-लिखने, गाली बकने* आदि पर भी लागू होती है।

मैंने कभी किसी बच्चे को उसके घर के विरुद्ध नहीं भड़काया है। अगर इन परेशान बच्चों में कोई सुधार हुआ है तो वह आज़ादी की वजह से ही हुआ है। गैर-जागरूक घर में इस चुनौती का सामना करना सम्भव नहीं होता। क्योंकि वहाँ आज़ादी का

क्या असर हो सकता है, इसकी समझ ही नदारद होती है।

मैं कुछ उदाहरणों से माता-पिता और बच्चे के बीच गलत रिश्ते को उजागर करना चाहूँगा। जिन बच्चों की बात मैं यहाँ लिख रहा हूँ वे किसी रूप में असामान्य नहीं हैं। वे तो बस एक ऐसे वातावरण के मारे हैं जहाँ बच्चों की वास्तविक ज़रूरतों की कोई समझ नहीं है।

एक लड़की है मिलड्रेड। वह जब भी छुट्टियों के बाद लौटती है तो द्वेष भरा, लड़ाकू और कपट भरा व्यवहार करती है। वह दरवाज़े भड़ाक से बन्द करती है, अपने कमरे की शिकायत करती है, अपना बिस्तर उसे ठीक नहीं लगता। और भी हज़ारों शिकायतों से भर जाती है। तकरीबन आधा सत्र बीतने के बाद ही उसे झेलना कुछ आसान हो पाता है। पूरी छुट्टियाँ वह और उसकी माँ एक दूसरे के पीछे पड़े रहते हैं। उसकी माँ ने दरअसल एक गलत इन्सान से विवाह किया है। दुनिया भर की स्कूली आज़ादी इस बच्ची को स्थाई सन्तोष नहीं दे सकती। सच्चाई यह है कि अगर छुट्टियों में उसका अनुभव बेहद तकलीफदेह रहा हो तो वह स्कूल लौटने पर छोटी-मोटी चोरियों भी करती है। माँ को इस स्थिति के प्रति सचेत करने पर भी उसका घरेलू वातावरण बदला नहीं जा सकता। वहाँ जगरूकता नहीं है और घृणा पटी पड़ी है। वहाँ हर पल बच्ची की ज़िन्दगी में दखलन्दाज़ी होती है। कई बार समरहिल आने के बाद भी बच्चा अपने घर के प्रभाव से बच नहीं सकता। ऐसा प्रभाव जिसमें न तो कोई मूल्य हों, ना ही बच्चे क्या सोचते या महसूस करते हैं, उसका कोई ज्ञान हो। दुर्भाग्य यह है कि लोगों को मूल्य आसानी से सिखाए नहीं जा सकते।

आठ साल का जॉनी जब स्कूल लौटता है तो उसके चेहरे का हाव-भाव ही बिगड़ा होता है। वह अपने से कमज़ोर बच्चों को छेड़ता है, उन पर धौंस जमाता है। उसकी माँ समरहिल में विश्वास करती हैं, पर पिता कठोर अनुशासन वाले इन्सान हैं। हुक्म होते ही जॉनी को उछलकर आदेश का पालन करना होता है। वह बताता है कि पिता अक्सर उसे चपतियाते हैं। उनका क्या किया जाए? पता नहीं।

मैंने एक पिता को खत लिखा, "आप अपने बेटे की किसी भी बात पर आलोचना न करें। ऐसा करना घातक होगा। उस पर नाराज़ न हों उसे डपटें नहीं। और सबसे ज़रूरी यह है कि उसे कभी कोई सज़ा न दें।" पर यही लड़का जब छुट्टियों में घर जाता है तो पिता उसे स्टेशन पर लेने आते हैं। लड़के से सबसे पहले कहते हैं, "तनकर तो खड़ा हो, कुबड़ाए क्यों जा रहा है।"

पीटर की माँ ने, जब-जब उसका बिस्तर सूखा मिले उसे एक अठन्नी देने का वादा किया। मैंने इसके विपरीत कदम उठाया और कहा कि बिस्तर गीला मिलने पर उसे तीन अठन्नियाँ मिलेंगी। पर बच्चे के मन में मेरे और माँ की बात को लेकर

द्वन्द्व न पैदा हो इसलिए मैंने माँ को समझाया कि वह मेरे इनाम के पहले अपना 'इनाम' बन्द कर दे। अब पीटर का बिस्तर स्कूल से ज़्यादा घर पर गीला होता है। उसकी मानसिक परेशानी का एक हिस्सा यह है कि वह बच्चा बने रहना चाहता है। वह अपने नन्हे भाई से बेहद जलता है। उसे अस्पष्ट रूप से यह भी समझ आता है कि उसकी माँ उसका इलाज करना चाहती है। पर मैं उसे यह जता देना चाहता हूँ कि उसका बिस्तर गीला भी हो जाए तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता। जब तक उसकी बच्चा बने रहने की ज़रूरत हो, मेरी तीन अठन्नियाँ उसे बच्चा बने रहने को प्रोत्साहित करती हैं। उस समय तक, जब वह *स्वाभाविक रूप से इस चरण से खुद-ब-खुद उबर नहीं जाता*। अगर अनुशासन या घूस के सहारे उसे सुधारने की कोशिश की जाती है तो उसके मन में, इस आदत को लेकर अपराध-बोध जगता है। इस बात को लेकर ही एक नैतिक मूल्य उस पर लाद दिया जाता है। एक नैतिक उपदेश झाड़ने वाला बनने से बेहतर है कि बच्चा बिस्तर गीला करे।

नन्हा जिमी छुट्टियों से लौटकर एलान करता है, मैं इस बार एक भी कक्षा से गायब नहीं होऊँगा। ज़ाहिर है उसके माता-पिता उस पर हाई-स्कूल परीक्षा दे डालने का दबाव डालते रहे होंगे। वह सप्ताह भर कक्षाओं में नियमित जाता है। उसके बाद वह महीने भर गोल कर जाता है। बातचीत से डाले गए दबाव की निरर्थकता इसी से सिद्ध हो जाती है। पर इससे भी खतरनाक बात यह है कि इस तरह की बातचीत बच्चे के विकास में आड़े आती है।

जैसा मैंने पहले ही कहा, ये बच्चे समस्याग्रस्त बच्चे नहीं हैं। एक तार्किक वातावरण और माता-पिता की सूझबूझ से वे सभी सामान्य बच्चे बन सकते हैं।

मेरी माता-पिता से शिकायत यह है कि वे सीखते ही नहीं हैं। बच्चों के साथ मेरा ज़्यादातर काम माता-पिता की भूलों को सुधारने का होता है।

मेरे पास एक बार एक समस्याग्रस्त बच्चा आया जो गलत शिक्षण का शिकार था। मैंने उसकी माँ को कहा कि उसे इस स्थिति को सुधारना होगा। उसने ऐसा करने का वायदा किया। गर्मियों की छुट्टियों के बाद वह उसे वापस लेकर आई।

मैंने कहा, "क्या तुमने वह प्रतिबंध हटा लिया।"

उसने कहा, "हाँ"

"बहुत अच्छा। लेकिन आपने किया क्या?"

मैंने कहा, "अपने शिश्न से खेलना गलत बात नहीं है। लेकिन यह एक बेवकूफी भरी चीज़ है।"

उसने एक प्रतिबंध को हटाकर दूसरा जड़ दिया था। और वह बेचारा बच्चा असामाजिक, बेइमान, घृणा और चिन्ता से भरा रहा।

मैं अभिभावकों को यह समझाने की कोशिश करता हूँ कि बच्चा कभी नहीं सीखेगा।

मेरा मुख्य काम अभिभावकों की गल्तियाँ सुधारना होता है। मेरे मन में उन माता-पिता के प्रति सहानुभूति भी है और प्रशंसा का भाव भी, जो पूरी ईमानदारी से पूर्व में की गई अपनी गल्तियों को देखने-समझने की कोशिश करते हैं और अपने बच्चों के प्रति अपने व्यवहार को सुधारने की कोशिश भी करते हैं। पर आश्चर्यजनक बात यह है कि शेष माता-पिता बच्चों के हिसाब से बदलने के बदले पुराने, निरर्थक और खतरनाक तौर-तरीकों को अपनाए रहना पसन्द करते हैं। और भी आश्चर्यजनक बात यह है कि वे मेरे प्रति बच्चों के स्नेह से जलते हैं।

दरअसल बच्चे मुझसे इतना प्यार नहीं करते जितना वे मेरी दखलन्दाज़ी न करने की नीति को पसन्द करते हैं। मैं उनके दिवास्वप्नों का पिता जो हूँ। जबकि उनके खुद के पिता 'खबरदार, शोरगुल इसी पल बन्द करो' की घोषणा करते हैं। मैंने कभी सभ्य व्यवहार या शिष्ट भाषा की माँग नहीं की। कभी यह नहीं पूछा कि हाथ-मुँह धोए गए हैं या नहीं। मैंने उनसे कभी हुकुमपरस्ती की, या श्रद्धा की या गौरव की रक्षा करने की माँग नहीं की। संक्षेप में मैंने बच्चों से वैसा ही सम्मानजनक बर्ताव किया जिसकी वयस्क अपने प्रति अपेक्षा करते हैं। और फिर मैं यह भी समझता हूँ कि उनके पिता और मेरे बीच कोई वास्तविक स्पर्धा हो ही नहीं सकती। उनका काम है परिवार के लिए पैसे कमाना। और मेरा काम है बच्चों का अध्ययन करना, उन्हें अपना पूरा समय और रुचि देना। अगर माता-पिता बाल मनोविज्ञान का अध्ययन नहीं करते ताकि वे अपने बच्चे के विकास के प्रति जागरूक रहें, तो वे पिछड़ जाएँगे। और सच यह है कि माता-पिता *अक्सर* काफी पीछे रह जाते हैं।

एक पिता ने मेरे स्कूल में पढ़ने वाली अपनी बच्ची को लिखा, ''अगर तुम्हारे हिज्जे इतने कमज़ोर हैं, तो बेहतर हो कि तुम खत ही न लिखो।'' और यह उस लड़की को लिखा गया, जिसके बारे में हम यह तय नहीं कर पाए थे कि वह मानसिक रूप से कमज़ोर है या नहीं। कई बार मुझे किसी शिकायती पिता या माँ को डपटना पड़ा है। कहना पड़ा है, ''आपका बेटा चोरी करता है, अभी तक बिस्तर गीला करता है। वह असामाजिक है, दुखी है, खुद को कमतर समझता है। और आप इस बात को रो रहे हैं कि वह जब स्टेशन पर उतरा तो उसका चेहरा और हाथ गन्दे थे।'' वैसे मुझे गुस्सा जल्दी नहीं आता। पर जब मैं ऐसी माँ या ऐसे पिता से मिलता हूँ जिन्हें यह पता नहीं चलता कि बच्चे के आचरण में क्या ज़रूरी है और क्या सतही, तो मैं नाराज़ हो जाता हूँ। शायद इसीलिए मुझे माता-पिता अपना विरोधी भी मान सकते हैं। पर जब कोई माँ अपने बच्चे से मिलने आती है और उसे बगीचे में गन्दा और फटेहाल देखने पर भी चहककर मुझसे कहती है कि, ''बेटा कितना स्वस्थ और खुश दिख रहा है,'' तो मेरा मन खुशी से भर उठता है।

मैं जानता हूँ कि यह बात बेहद कठिन है। आखिर हम सबके अपने-अपने मानक

होते हैं, अपने व्यक्तिगत मूल्य होते हैं। इनके हिसाब से हम दूसरों को नापा करते हैं। शायद मुझे माफी माँगनी चाहिए कि मैं बच्चों के बारे में बड़ा कट्टर हूँ। उन माता-पिताओं के प्रति धीरज खो बैठता हूँ, जो बच्चों को मेरी नज़र से नहीं देखते। पर अगर मैं माफी माँग लूँ तो मैं ढोंगी ही कहलाऊँगा। क्योंकि सच्चाई यह है कि मैं जानता हूँ कि जहाँ तक बच्चों का सवाल है, मेरे ही मूल्य सही हैं।

जो माँ-बाप अपने बच्चे के साथ अपने खराब रिश्तों को सच में सुधारना चाहते हैं, उन्हें खुद से कुछ सीधे-सच्चे सवाल करने चाहिए। दर्ज़नों सार्थक सवाल मैं सुझा सकता हूँ। *क्या मैं अपने बच्चे से इसलिए नाराज़ हूँ कि आज सुबह मेरा अपने पति (या पत्नी) से झगड़ा हुआ था? क्या मेरी नाराज़गी का कारण यह है कि रात को सहवास में मुझे तृप्ति का अनुभव नहीं हुआ? या फिर इसलिए कि पड़ोसन का कहना है कि मैं अपने बेटे को बिगड़ा बना रही हूँ? या इसलिए कि मेरा वैवाहिक जीवन असफल है? या फिर इसलिए कि दफतर में बॉस ने मुझे फटकार लगाई है?* इस तरह के सवाल अगर खुद से पूछे जाएँ तो सच में फायदेमन्द होंगे।

पर गहराई से जुड़े ऐसे सवाल जिनका ताल्लुक जीवन भर के अनुकूलन और पूर्वाग्रहों से है, वे तो हमारी चेतना के दायरे से भी बाहर हैं। यह कल्पना करना असम्भव है कि एक खीझा हुआ पिता थमकर खुद से पूछे कि *क्या बेटे के गाली बकने से मैं इसलिए नाराज़ हूँ क्योंकि मेरा पालन-पोषण डण्डे के ज़ोर पर, नीति उपदेशों के साथ किया गया था? मेरे मन में खुदा का और निरर्थक सामाजिक तौर तरीकों का खौफ बैठाया गया था? मेरी स्वाभाविक यौन-इच्छाओं को पूरी ताकत से दबाया गया था?* इन सवालों के जवाब तलाशने का मतलब होगा आत्मविश्लेषण करना, जो हममें से अधिकांश लोगों के बूते के बाहर है। दुर्भाग्य है, क्योंकि अगर इनका जवाब मिलता तो कई बच्चों को मनोरोग और दुख से बचाया जा सकता।

बाइबल के जिस उदाहरण को पीढ़ियों से भौतिक अर्थ में समझा जाता रहा है वह यह है कि पिता के पापों के फल बच्चों को झेलने पड़ते हैं। अशिक्षित लोग भी नाटककार इब्सन की रचना *घोस्ट्स* (भूत) की यह बात बखूबी समझ लेते हैं कि नाटक में पिता के यौनरोगी होने के कारण बेटे का जीवन बर्बाद हो जाता है। पर जो बात समझी नहीं जाती वह यह है कि अक्सर पिता के मानसिक पापों के कारण बच्चे का सर्वनाश होता है। कम आयु में ही बच्चों पर अपने तौर-तरीके लादने से पैदा होने वाली चारित्रिक विकृतियों से बच्चों को बचाने का एक ही तरीका है- जागरूक माता-पिता द्वारा प्रारम्भ से ही बच्चे को स्वनिर्देशन की राह पर चलाना।

इस बात पर ज़ोर देना होगा कि स्वनिर्देशन का मतलब है हमारे तयशुदा तौर-तरीकों के परे बहुत कुछ देना। माता-पिता को कम से कम प्रारम्भिक दो वर्षों तक अपने काफी समय और स्वार्थों की आहुति देनी होगी। उन्हें अपने शिशु का प्यार

और कृतज्ञता पाने के लिए कोई खेल करना बन्द करना होगा। जब रिश्तेदार मिलने आएँ तो शिशु से मुस्कान या करतब दिखाकर प्रदर्शन करने की माँग करना बन्द करना होगा। स्वनिर्देशन का अर्थ है अभिभावकों का निस्स्वार्थ होना। इस बात पर मैं ज़ोर इसलिए दे रहा हूँ क्योंकि मैंने नौजवान माता-पिता को यह सोचते पाया है कि वे बच्चे को स्वनिर्देशन की राह पर चला रहे हैं, जबकि दरअसल वे उसे अपनी सुविधाओं के अनुरूप ढाल रहे होते हैं। जब उन्हें रात को सिनेमा देखने जाना हो तो वे उसे जल्दी सोने पर मजबूर करते हैं। कुछ बाद में वे बच्चे को ऐसा मुलायम, बिना शोर करने वाला खिलौना देते हैं जिससे पापाजी के आराम में खलल न पड़े।

''बस भी कीजिए,'' माँ-बाप प्रतिवाद करते हैं, ''यह सब आप हमसे *कैसे* कह सकते हैं? आखिर हमारे भी ज़िन्दगी में कुछ अधिकार हैं।'' पर मेरा जवाब है - ''नहीं, बच्चे के शुरुआती दो चार सालों तक आपके कोई अधिकार नहीं हैं। क्योंकि ये साल सतत निगहबानी के हैं। क्योंकि हमारा समूचा वातावरण ही स्वनिर्देशन के खिलाफ है। इसलिए सचेत रहकर बच्चे के हित में एक कड़ी लड़ाई लड़नी पड़ती है।''

जो माता-पिता अपने बच्चों को स्वनिर्देशन और आज़ादी की राह पर चलाना चाहते हैं, उनके लिए मेरे कुछ दूसरे सुझाव भी हैं।

बच्चे को बच्चा गाड़ी में डाल, घण्टों तक बाग में छोड़ आना खतरनाक काम है। किसी को पता ही नहीं चल सकता कि इस दौरान अगर शिशु अचानक जग जाए, और खुद को एक अनजान जगह पाकर डर जाए, या उसे अकेलापन महसूस हो, तो क्या होगा? जिन लोगों ने ऐसे में बच्चों की चीखें सुनी हैं, उन्हें इस बेहूदा तरीके का कुछ अन्दाज़ तो ज़रूर हुआ होगा।

अगर आप चाहते हैं कि आपका बच्चा बिना मनोरोगी बने बड़ा हो, तो *खबरदार*, उससे दूरी मत बनाएँ। ज़रूरी है कि आप उससे खेलें, केवल उसके खेल ही नहीं, बल्कि बच्चा बनकर *उसके साथ* खेलें। उसके जीवन में घुल जाएँ, उसकी रुचियों को स्वीकारें। अगर आप में बेवकूफी भरा आत्म-सम्मान का भाव ठूँस-ठूँसकर भरा है तो आप यह नहीं कर पाएँगे।

अगर बच्चे दादा-दादी या नाना-नानी से अलग रहें तो बेहतर रहता है। क्योंकि अक्सर बुज़ुर्गवार बच्चों को पालने-पोसने के कायदे-कानून खुद बनाना चाहते हैं। वे सिर्फ उसकी अच्छाइयाँ या कमियों पर नज़र रखते हैं। इस तरह के घरों में बच्चों के दो नहीं चार-चार बॉस होते हैं। बढ़िया से बढ़िया घरों में भी नाना-दादा बचपन के बारे में अपने बासी विचार लागू करना चाहते हैं। अक्सर दादा-दादी, नाना-नानी अपने मालिकाना लाड़-प्यार से बच्चों को बिगाड़ते हैं।

ऐसा खासतौर से तब होता है जब दादी-नानी के पास, अपनी पारिवारिक ज़िम्मेदारियों से फारिग हो चुकने के कारण, कोई निजी मकसद नहीं रह जाता। तीसरी पीढ़ी उन्हें फिर से काम शुरू करने का मौका देती है। वे यह मानने लगते हैं कि उनकी बहू या बेटी अकुशल माँ है, सो दादी या नानी लगाम सम्भाल लेती है। इससे बच्चा दो दिशाओं में खिंचने लगता है। सम्भावना यह बनती है कि वह *दोनों ही* पक्षों से दूरी बना ले। बच्चे के लिए बहसबाज़ी का मतलब होता है प्रेम की नामौजूदगी। फिर चाहे यह बहस माँ और दादी/नानी में हो या पति-पत्नी में। लाख कोशिशों के बावजूद आपसी मनमुटाव बच्चे से छुपा नहीं रह पाता। वह अचेतन रूप से ही यह *समझने* लगता है कि उसके घर में प्यार नामौजूद है।

कई बार स्कूल का सवाल भी परेशानी का कारण बनता है। सम्भव है आपकी पत्नी बच्चे को एक प्रगतिशील सहशिक्षण वाले स्कूल में पढ़ाना चाहती है। और आपकी इच्छा यह हो कि वह किसी सरकारी स्कूल में पढ़े। सम्भव है इस कारण आप दोनों में टकराव हो। इस स्थिति से निपटने के मेरे पास कोई ठोस सुझाव नहीं हैं। पर मैं यह ज़रूर जानता हूँ कि मेरे सबसे मुश्किल छात्र-छात्राएँ वे बच्चे रहे हैं जिनके माता-पिता के बीच शिक्षा को लेकर मतभेद था। हमारा एक छात्र था जिसके पिता समरहिल के विचारों के पूरी तरह खिलाफ थे। पर घर में शान्ति बनाए रखने के नाम पर उन्होंने घुटने टेक दिए। वह बच्चा यहाँ कोई प्रगति नहीं कर सका। इसलिए, क्योंकि वह जानता था कि उसके पिता स्कूल से नाखुश थे। बच्चे के लिए ऐसी स्थिति भारी परेशानी खड़ी करती है। ऐसे में वह यहाँ जड़ें नहीं जमा पाता। उसे डर रहता है कि उसके पिता किसी भी दिन यह तय कर उसका दाखिला किसी अनुशासन वाले स्कूल में करवा सकते हैं।

माता-पिता और शिक्षकों के बीच थोड़ा बहुत तनाव तो रहता है। कई शिक्षक यह बात समझते हैं। कुछ तो शिक्षकों और माता-पिता के बीच होने वाली बैठकों के द्वारा दोनों पक्षों को पास लाने की कोशिश भी करते हैं। यह बहुत ही बढ़िया बात है। हर जगह यह होना चाहिए। शिक्षकों को यह समझना चाहिए कि बच्चों के जीवन में उनकी भूमिका कभी भी उतनी प्रभावशाली नहीं हो सकती है, जितनी माता-पिता की होती है। यही कारण है कि अगर बच्चा घरेलू वातावरण के कारण एक समस्याग्रस्त बच्चा बना है, तो उसे सुधारना इतना कठिन बन जाता है।

माँ-बाप को यह समझना चाहिए कि आज नहीं तो कल, बच्चे उनसे छिटकेंगे और दूर होंगे। ज़ाहिर है मैं यह नहीं कह रहा कि बच्चों को माता-पिता से दूर रहना चाहिए, या कभी उनसे मिलना ही नहीं चाहिए। मेरा मतलब है *मानसिक और आत्मिक* दूरी से। एक शिशु की अपने घर पर जो निर्भरता होती है, उससे कट जाने से। स्वाभाविक है कि माँ अपने बच्चे को खुद पर निर्भर बनाए रखना चाहती है।

मैं तमाम परिवारों से परिचित हूँ जहाँ कोई बेटी अपने बूढ़े माता-पिता की देखभाल के लिए वहीं बनी रहती है। ऐसे अधिकांश उदाहरणों में उनका परिवार सुखी नहीं होता।

बेटी के चित्त का एक भाग उसे दुनिया में निकलने और खुद की ज़िन्दगी अपनी तरह से जीने को उकसाता है। पर उसका दूसरा हिस्सा, ज़िम्मेदार हिस्सा, उसे अपने माता-पिता के पास रहने को मजबूर करता है। उसके अन्तस में लगातार एक द्वन्द्व चलता है। और यह द्वन्द्व अक्सर उसकी खीझ में झलकता है, *ज़ाहिर है मैं माँ को खूब प्यार करती हूँ। पर सच में वे कई बार इतना थकाती हैं, कि बस।*

आज हज़ारों-लाखों महिलाएँ दुनिया का सबसे उबाऊ काम करती हैं। वे रोटी पकाती हैं, बर्तन माँजती हैं, कपड़े धोती और इस्तरी करती हैं, झाड़ू-बुहारी करती हैं। वे घर की देखभाल करने वाली निःशुल्क दासियाँ हैं और उनका जीवन उबाऊ और थकाऊ है। परिवार के घर छोड़ते ही माँ का काम खत्म हो जाता है। नन्हें चूज़े घोंसले से एक दिन उड़ जाते हैं और वह घोंसला वीरान हो जाता है। माँ को शिकायत की नहीं, हमदर्दी की ज़रूरत रहती है। स्वाभाविक है कि वह चाहती है कि यह स्थिति जब तक सम्भव हो बनी रहे। फिर चाहे इस प्रक्रिया में उसके बच्चों को नुकसान ही क्यों न पहुँचे। इससे एक संकेत तो यह मिलता है कि हरेक महिला का अपना कोई न कोई काम-धँधा तो होना ही चाहिए, ताकि बच्चों के बड़े होने के बाद वह उसे फिर से अपना सके।

माता-पिता खुदा की जगह होते हैं। यह खुदा डाह करने वाला खुदा है। माता-पिता के पास कानूनी रूप से यह अधिकार है कि वे यह कह सकें कि *मैं अपने बच्चे को इसी तरह ढालूँगा*। माँ-बाप चाहें तो बच्चों को पीट सकते हैं। उन्हें डरा सकते हैं, उनका जीना हराम कर सकते हैं। इस स्थिति में कानून सिर्फ तभी दखल दे सकता है, जब बच्चे को गम्भीर शारीरिक नुकसान पहुँचे। पर अगर यह नुकसान मानसिक हो, तो कितना भी गम्भीर नुकसान क्यों न हो कानूनी दखल सम्भव नहीं होती। त्रासदी यह है कि माता-पिता का पक्का विश्वास यह होता है कि वे जो कुछ भी कर रहे हैं, अपने बच्चे के भले के लिए ही कर रहे हैं।

समूची मानवता इसी आस पर टिकी है कि अगर माता-पिता सजग हों, और बच्चों के मुक्ति, ज्ञान और प्रेम की दिशा में बढ़ाने के पक्ष में हों, तो वे *जो कुछ करेंगे* वह उनके हित में ही होगा।

अगर इस किताब से एक भी माता-पिता को यह समझ आ सके कि वे अपने बच्चे पर किस तरह, और किस हद तक अच्छा या बुरा असर डाल सकते हैं, तो इसे लिखने का मकसद हासिल हो जाएगा।